Manusha Bothra

शांति देवी जैडिया

सुशील स्तोक संग्रह

प्राप्ति स्थान

श्रीमान धर्मचन्दजी मेहता
C/o सुधर्स एम्पोरियम
३७, लक्ष्मीबाई मार्ग, झाबुआ (म.प्र.) पिन-४५७६६१
© ४३५०५ (०७३९२)

श्रीमान ताराचंदजी लोढ़ा
C/o सर्वोत्तम हेण्डलूम
मेन रोड, बालाघाट (म.प्र.) पिन-४८१००१
© ७००८२ (०७६३२)

सहयोग राशि १० रुपये
प्रथम सस्करण १९९७
प्रतियाँ ३०००

मुद्रक स्टॅन्डर्ड प्रिंटिंग प्रेस, नागपुर ✆ (O) 762827, (W) 781742, (R) 781583

हमारी कलम से लिखी बात - आपके कर में . . .

अरिहंतो द्वारा कथित, गणधरो द्वारा ग्रंथित, आगमो का अध्ययन सामान्य जनता के लिए कठिन सा हो जाता है, किन्तु कोई भी ज्ञान पिपासु पाठक सरलता से सिद्धांत का ज्ञान प्राप्त कर सके इसलिए शास्त्रो मे आये हुए मूल पाठो के अर्थ रुप साध्वी रत्ना पू. गुरुवर्या **श्री सुशीलाकुंवरजी मा. सा.** की सुशिष्याओ ने परम पिता परमेश्वर चरम तीर्थकर **श्रमण भ. महावीर स्वामी** के मोक्ष कल्याणक एवं अपने महान उपकारी, तपोधनी स्वर्गीय **पू. गुरुदेव श्री लालचंद्रजी** मा. सा की छट्ठवी पूण्यतिथि की स्मृति मे यह "**सुशील स्तोक संग्रह**" तैयार किया गया है।

अंतर "चेतना" को जागृत करने हेतु प्रस्तुत पुस्तक को "प्रीति" पूर्वक पठन-पाठन करेगे तो निश्चित ही क्रमशः विकास करते हुए लक्ष्य स्थान को प्राप्त कर सकेगे।

पूण्य एवं पुरुषार्थ से प्राप्त राशी का उदारतापूर्वक सदुपयोग करनेवाले सभी महानुभावो का हृदय से आभार प्रगट करते हुए संकलन या प्रकाशन मे त्रुटि बदल "तस्स मिच्छामि दुक्कडं"।

देव-गुरु निर्वाण दिन
(दीपावली)
कार्तिक वदी अमावस्या
सन् - १९९७
वीर सवत् - २५२४

"चेतना-प्रीति"

प्रस्तावना

संसार की आसक्ति घटावे वही ज्ञान सम्यक् ज्ञान है।
आराधना के प्रति ध्यान बढ़ावे वही ज्ञान सम्यक् ज्ञान है।
विराधना के प्रति ध्यान हटावे वही ज्ञान सम्यक् ज्ञान है।
जन्म मरण की जंजीर तोड़ावे वही ज्ञान सम्यक् ज्ञान है।

मशीन की खुराक तेल है। इंजिन की खुराक कोयला पानी एवं शरीर की खुराक भोजन-पानी है। वैसे ही आत्मा की खुराक जिनवाणी है। इस जिनवाणी को तीन भाग मे विभाजित किया गया है - सूत्र रुप, अर्थ रुप एवं तदुभय रुप (सूत्र-अर्थ दोनों)। **''सुशील स्तोक संग्रह''** मे जिनवाणी का अर्थ थोकड़े रुप मे प्रस्तुत किया गया है। दूध का सार घी, पुष्प का सार इत्र, गन्ने का सार शक्कर वैसे ही जिनवाणी का सार थोकड़ा है।

जिस तरह विशेष ज्ञान प्राप्त करके डॉक्टर उस विषय का विशेषज्ञ बन जाता है; जैसे हृदय रोग, नेत्र रोग, हड्डी रोग आदि का विशेषज्ञ। इसी प्रकार आत्मज्ञ बनने के लिए हमारे जीवन मे मोक्षमार्ग के प्रथम सोपान सम्यक्ज्ञान की अत्यंत आवश्यकता है। प्रथम सीढ़ी पर चढ जाने के बाद ऊपर चढ़ने की उत्सुकता अपने आप जागृत हो जाती है। अतः अनादि काल से लगे हुए आत्मिक रोग को दूर करने के लिए सम्यक् ज्ञान की सीढ़ी पर अग्रसर होने के लिए "थोकडे" के माध्यम से कदम बढ़ाइये।

पारसमल वेताला

५६, जानकी नगर एक्सटेंशन
इंदौर-४५२००१ (म.प्र)

जैनं जयति शासनम्

दानदाताओं की

शुभ नामावली

५०००/- 'सुशील समाधान' से प्राप्त - द्वारा - सुरभी चौपडा

५०००/- सौ. शीतलदेवी जवरीलालजी झामड, मुंबई

३०००/- दादीजी एवं पिताजी की स्मृति मे नितीन व पंकज तातेड की ओर से, बैतुल

३०००/- स्व. चंद्रप्रकाशजी की स्मृति मे सुपुत्र संजु व राजु चौपडा की ओर से, नागपूर

२५००/- श्री निर्मलकुमारजी पारसमलजी बाघमार, जबलपुर

२०००/- हिमांशु - हार्दिक के (८ + ६ वर्ष की लघुवय मे) प्रतिक्रमण कंठस्थ की खुशी मे चोरडीया परिवार की ओर से, नागपूर

२०००/- श्री रमेशचंदजी इंदरचंदजी चौपड़ा, के. जी. एफ. (बेगलोर)

२०००/- सौ मदनदेवी सुरेशचंदजी झामड, मुंबई

२०००/- सौ मायादेवी उत्तमचंदजी तातेड, खापा

२०००/- सौ तारादेवी रतनलालजी बाफणा, जलगांव

२०००/- सौ किरणबाई पारसमलजी बेताला, इंदौर

२०००/- सौ. मोहनीबाई धरमचदजी बेताला, इंदौर

२०००/- श्री बनवारीलालजी चतुरभुजजी अग्रवाल, नागपुर

२०००/- श्री मदनलालजी रामबिलासजी अग्रवाल, नागपुर

१५००/- सौ आशाबाई छगनलालजी बब, मुंदी

१५००/- श्री सुधीरकुमारजी शिखरचंदजी चतुरमोहता, बालाघाट

१५००/- सौ. प्रभादेवी चतुरमोहता की पुत्रीयो की ओर से

१०००/- स्व गुणवंतीबेन -नत्थुभाई मालदे की स्मृति मे सुपुत्रो की ओर से, नांदुरी (जामनगर)

१०००/- स्व. शांताबाई की स्मृति मे श्री हीरालालजी श्रीश्रीमाल की ओर से, लिमड़ी (गुजरात)

१०००/- स्व. कमलाबाई - मगनलालजी खाबिया की स्मृति मे सुपुत्रों की ओर से, कुशलगढ

१०००/- जसवंतलालजी की स्मृति मे धर्मपत्नि श्रीमती शकुन्तला बेन श्रीश्रीमाल, लिमडी

१०००/- अंकुर - अंकीत के जन्मोत्सव की खुशी मे, सौ. वदना राजेन्द्र कुमार श्रीश्रीमाल, लिमडी

१०००/- सौ. राका बेन कुशलगढ़, सौ. चदा दसई, सौ सगिता बड़ावदा

१०००/- धर्मानुरागी सुश्राविका की ओर से

१०००/- श्री पकज कवाड (कतरगांव) की दीक्षा पर प्राप्त राशी से

१०००/- श्रीमती शांताबाई ओस्तवाल, पीपरी; सौ. धन्नाबाई बोथरा, पारसिवनी

१०००/- स्व सोहनबाई की स्मृति मे राकेश कुमार प्रकाशचद नाहटा की ओर से, कुशलगढ

१०००/- श्री सुशील कुमारजी रमेशचंदजी जैन, मनावर

१०००/- स्व. पारसमलजी - मोहनलालजी की स्मृति मे मंनाबाई चौपडा द्वारा के. जी एफ

१०००/- स्व भवरलालजी की स्मृति मे श्रीमती अनुपकंवरबाई बाफणा, भोपाल

१०००/- कमलाबाई डागा एवं ताराबाई बोथरा, बैतुल

१०००/- सौ. अरुणा अशोककुमारजी लोढा, मुलताई

१०००/- सौ. शोभादेवी हरीशकुमारजी बोथरा, पारशिवनी

१०००/- सौ दयादेवी प्रीतमचंदजी जैन, नागपुर

१०००/- सौ छोटीबाई बाघमार, सौ. कमलाबाई बाघमार, जबलपुर

१०००/- सौ. कचनबाई बाघमार, सौ कमलादेवी बाघमार, जबलपुर

१०००/- श्री इंदरचंदजी बैद्य, राजनादगाव

१०००/- सौ. पुतलबाई प्रेमराजजी बेताला, इंदौर

१०००/- जगदीशभाई बैतुल, महेद्रसिहजी खजांची, इदौर

१०००/- सौ. छोटीबाई दगडुमलजी साड, हरसुद

१०००/- दीलिप कुमार की स्मृति मे पिताश्री मिश्रीलालजी संचेती की ओर से भिलाई-३

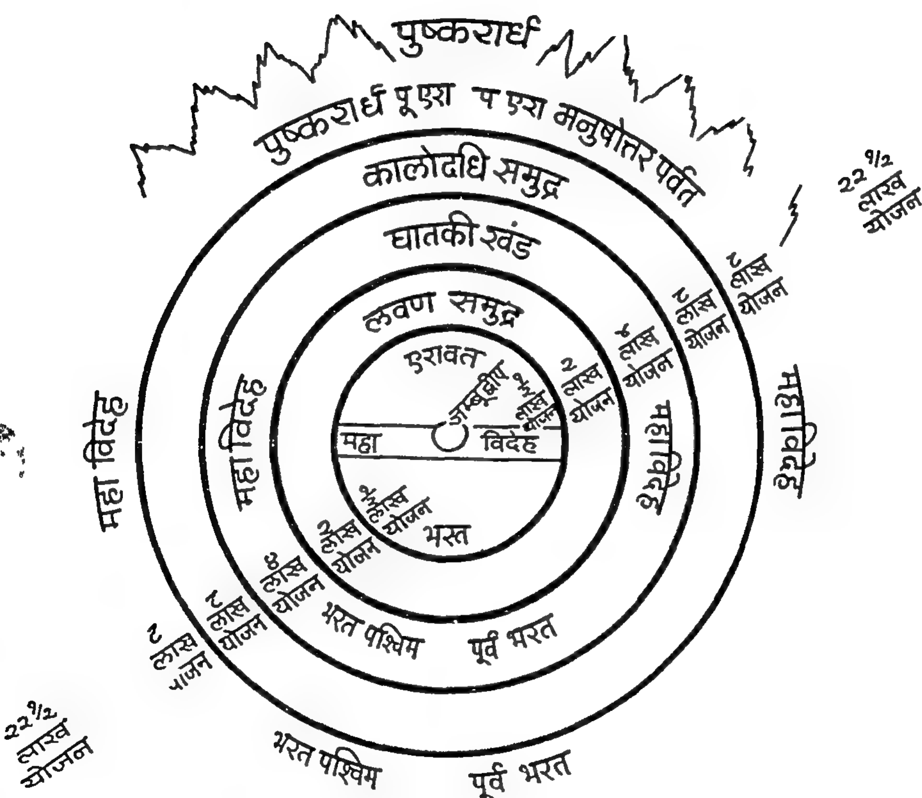
१०००/- धर्मवत्सला सुश्राविका की ओर से

शूरवीर के लिए मर तृण के समान है।
अनाशक्त के लिए संसार तृण के समान है।।
निस्पृह जीवन तो कोई विरल ही जीता है।
उदार के लिए वैभव भी तृण के समान है।।

अनुक्रमणिका

------

४५ लाख योजन का अढाइद्वीप



२५ बोल

१ **पहले बोले गति चार** - नरकगति, तिर्यचगति, मनुष्यगति, देवगति।

२ **दूसरे बोले जाति पांच** - एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय।

३ **तीसरे बोले काया छह** ·- पृथ्वीकाय, अप्काय, तेऊकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय।

४ **चौथे बोले इन्द्रिय पांच** - श्रोतेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शनेन्द्रिय।

५ **पांचवें बोले पर्याप्ति छह** - आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति, मनपर्याप्ति।

६ **छट्ठे बोले प्राण दस** - श्रोतेन्द्रियबलप्राण, चक्षुइन्द्रियबलप्राण, घ्राणेन्द्रियबलप्राण, रसनेन्द्रियबलप्राण, स्पर्शनेन्द्रियबलप्राण, मनबलप्राण, वचनबलप्राण, कायाबलप्राण, श्वासोच्छवासबलप्राण, आयुष्यबलप्राण।

७. **सातवें बोले शरीर पांच** .- औदारिकशरीर, वैक्रियशरीर, आहारकशरीर, तेजस्शरीर, कार्मणशरीर।

८ **आठवें बोले योग पन्द्रह** - चार मन के-सत्यमनयोग, असत्यमनयोग, मिश्रमनयोग, व्यवहार मनयोग।

चार वचन के .- सत्यवचनयोग, असत्यवचनयोग, मिश्रवचनयोग, व्यवहारवचनयोग।

सात काया के - औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियकाययोग, वैक्रियमिश्रकाययोग, आहारककाययोग, आहारकमिश्रकाययोग, कार्मणकाययोग।

९ **नवमें बोले उपयोग बारह** - पाच ज्ञान के - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान, केवलज्ञान।

तीन अज्ञान के :- मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान।

चार दर्शन के :- चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन।

१०. **दसवें बोले कर्म आठ** :- ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, अन्तराय।

११. **ग्यारहवें बोले गुणस्थान चौदह** :- मिथ्यात्व गुणस्थान, सास्वादन गुणस्थान, मिश्रगुणस्थान, अविरतिसम्यक्दृष्टि गुणस्थान, देशविरतिश्रावक गुणस्थान, प्रमादीसाधु गुणस्थान, अप्रमादीसाधु गुणस्थान, नियट्टीबादर गुणस्थान, अनियट्टीबादर गुणस्थान, सूक्ष्मसंपराय गुणस्थान, उपशांतमोहनीय गुणस्थान, क्षीणमोहनीय गुणस्थान, सयोगीकेवली गुणस्थान, अयोगीकेवली गुणस्थान।

१२. **बारहवें बोले पांच इन्द्रियों के २३ विषय और २४० विकार** :-

१. श्रोतेन्द्रिय के तीन विषय, १२ विकार :- जीवशब्द, अजीव शब्द, मिश्रशब्द - ये तीन शुभ और तीन अशुभ इन छह पर राग और इन छह पर द्वेष कुल १२ विकार।

२. चक्षुइन्द्रिय के पांच विषय, ६० विकार .-
काला, नीला, लाल, पीला, सफेद - ये पांच सचित्त, पांच अचित्त, पांच मिश्र ये १५ शुभ, १५ अशुभ इन ३० पर राग और ३० पर द्वेष कुल ६० विकार।

३. घ्राणेन्द्रिय के दो विषय, १२ विकार :- सुरभिगंध, दुरभिगंध- ये दो सचित्त, दो अचित्त, दो मिश्र, इन छह पर राग और छह पर द्वेष कुल १२ विकार।

४. रसनेन्द्रिय के पांच विषय, ६० विकार :-
कड़वा, कषैला, खट्टा, मीठा, तीखा - ये पांच सचित्त, पांच अचित्त, पांच मिश्र ये १५ शुभ, १५ अशुभ इन ३० पर राग और ३० पर द्वेष कुल ६० विकार।

५ स्पर्शनेन्द्रिय के आठ विषय, ९६ विकार :-

हल्का, भारी, ठण्डा, गरम, लूखा, चिकना, खुरदरा, कोमल-ये आठ सचित्त, आठ अचित्त, आठ मिश्र ये २४ शुभ और २४ अशुभ, ४८ पर राग और ४८ पर द्वेष कुल ९६ विकार।

१३. तेरहवें बोले मिथ्यात्व के दस भेद -

जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व, अजीव को जीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व, धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व, अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व, साधु को असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, संसार के मार्ग को मोक्ष का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, मोक्ष के मार्ग को संसार का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, आठ कर्मो से मुक्त को अमुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व, आठ कर्मो से अमुक्त को मुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व।

१४. चौदहवें बोले छोटी नवतत्व के ११५ भेद :-

१. जीव के १४ भेद : सूक्ष्म एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, सज्ञी पंचेन्द्रिय इन सात के अपर्याप्त और पर्याप्त।

२ अजीव के १४ भेद :- धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय इन तीन के तीन, तीन भेद - स्कध, देश, प्रदेश। काल का एक भेद कालद्रव्य। पुद्गलास्तिकाय के चार भेद - स्कंध, देश, प्रदेश और परमाणुपुद्गल।

३ पुण्य के ९ भेद :- अन्नपुण्य, पाणपुण्य, लयनपुण्य, सयणपुण्य, वस्त्रपुण्य, मनपुण्य, वचनपुण्य, कायापुण्य, नमस्कारपुण्य।

४. पाप के अठारह भेद - नवतत्त्व के स्तोक से जानना।

५ आश्रव के २० भेद - नवतत्त्व के स्तोक से जानना।

६ संवर के २० भेद - नवतत्त्व के स्तोक से जानना।

७ निर्जरा के १२ भेद - नवतत्त्व के स्तोक से जानना।

८ बंध के चार भेद - प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश।

९. मोक्ष के चार भेद - सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप।

१५. **पन्द्रहवें बोले आत्मा आठ** :- द्रव्यआत्मा, कषायआत्मा, योगआत्मा, उपयोगआत्मा, ज्ञानआत्मा, दर्शनआत्मा, चारित्रआत्मा, वीर्यआत्मा।

१६. **सोलहवें बोले दण्डक चौबीस** :-

※ सात नारकी का एक दण्डक - सात नारकी के नाम :- धम्मा, वंशा, शीला, अंजना, रिट्ठा, मघा, माघवई।

※ इनके गोत्र :- रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालूकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा, तमःतमःप्रभा।

※ दस भवनपतियो के दस दण्डक :- असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युतकुमार, अग्निकुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार, पवनकुमार, स्तनितकुमार।

※ पांच स्थावर के पांच दण्डक :- पृथ्वीकाय, अप्काय, तेऊकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय।

※ तीन विकलेन्द्रिय के तीन दण्डक :- बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय।

※ तिर्यच पंचेन्द्रिय का एक दण्डक।

※ मनुष्य का एक दण्डक।

※ वाणव्यन्तर देवो का एक दण्डक।

※ ज्योतिष देवो का एक दण्डक।

※ वैमानिक देवो का एक दण्डक।

१७. **सतरहवें बोले लेश्या छह** :- कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या।

१८ **अठारहवें बोले दृष्टि तीन** :- सम्यक्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि मिश्रदृष्टि।

१९ **उन्नीसवें बोले ध्यान चार** .- आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान।

२० **बीसवें बोले ६ द्रव्य के ३० भेद** :-

नाम	द्रव्य	क्षेत्र	काल
१. धर्मास्तिकाय	एक	लोकप्रमाण	अनादि अनत
२ अधर्मास्तिकाय	एक	लोकप्रमाण	अनादि अनंत
३ आकाशास्तिकाय	एक	लोकालोक प्रमाण	अनादि अनंत
४. काल	अनत	ढाईद्वीप प्रमाण	अनादि अनत
५. जीवास्तिकाय	अनंत	लोकप्रमाण	अनादि अनत
६. पुद्‌गलास्तिकाय	अनत	लोकप्रमाण	अनादि अनंत

भाव	गुण	दृष्टांत
१. अरुपी	चलन सहाय	पानी मे मछली
२. अरुपी	स्थिर सहाय	पथिक को छाया
३. अरुपी	आकाश मे विकाश	दूध मे पताशा, भीत मे खुटी
४. अरुपी	वर्तना	कपडा-कैंची
५. अरुपी	उपयोग	चन्द्रमा की कला
६. रुपी	सडन, गलन, विध्वंसन	बादल

२१ **इक्कीसवें बोले राशि दो** :- जीव राशि, अजीव राशि। जीवराशि के ५६३ भेद, अजीव राशि के ५६० भेद।

२२. **बावीसवें बोले श्रावकजी के बारह व्रत** -

१ पहले व्रत मे श्रावकजी बडी हिसा करे नही।

२ दूसरे व्रत मे श्रावकजी बडा झूठ बोले नही।

३ तीसरे व्रत मे श्रावकजी बडी चोरी करे नही।

४ चौथे व्रत मे श्रावकजी पर स्त्री का त्याग करे, स्व स्त्री की मर्यादा करे।

५. पांचवे व्रत मे श्रावकजी परिग्रह की मर्यादा करे।

६. छट्ठे व्रत मे श्रावकजी छहो दिशाओ की मर्यादा करे।

७. सातवे व्रत मे श्रावकजी छब्बीस बोल की मर्यादा करे, पद्रह कर्मादान का त्याग करे।

८. आठवे व्रत मे श्रावकजी अनर्थदण्ड का त्याग करे।

९ नववे व्रत मे श्रावकजी प्रतिदिन शुद्ध सामायिक करे।

१०. दसवे व्रत मे श्रावकजी संवर करे, चौदह नियम धारण करे, तीन मनोरथ का चितन करे।

११. ग्यारहवे व्रत मे श्रावकजी प्रतिपूर्ण पौषध करे।

१२. बारहवे व्रत मे श्रावकजी १४ प्रकार का निर्दोष और सूझता दान बहरावे।

२३. तेइसवें बोले साधुजी के पांच महाव्रत :-

१. पहले महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से हिसा करे नही, तीन करण, तीन योग से।

२. दूसरे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से झूठ बोले नही, तीन करण, तीन योग से।

३ तीसरे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से चोरी करे नही, तीन करण, तीन योग से।

४. चौथे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से मैथुन सेवे नही, तीन करण, तीन योग से।

५ पांचवे महाव्रत मे साधुजी महाराज सर्वथा प्रकार से परिग्रह रखे नही, तीन करण, तीन योग से।

२४ **चौबीसवें बोले श्रावकजी के भंग ४९ .-**

अंक	**भंग**	**करण**	**योग**
११	९	१	१
१२	९	१	२
१३	३	१	३
२१	९	२	१
२२	९	२	२
२३	३	२	३
३१	३	३	१
३२	३	३	२
३३	१	३	३

करण - करना नही, कराना नही, अनुमोदना नही।

योग - मन, वचन, काया।

२५ **पच्चीसवें बोले चारित्र पांच** :- सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्ध, सूक्ष्मसंपराय, यथाख्यात चारित्र।

अल्पबहुत्व

१. सबसे थोडे २३ वे, २५ वे बोल वाले (साधु की अपेक्षा)

२ उससे २२ वे, २४ वे बोल वाले असख्यात गुणा (श्रावक की ..)

३ उससे १९ वे बोल वाले असंख्यात गुणा (सन्नी की ..)

४. उससे १३ वे बोल वाले अनंत गुणा (मिथ्यात्व की ..)

५ उससे ४ थे, १२ वे बोल वाले विशेष (सइन्द्रिय की .)

६ उससे ८ वे, १७ वे बोल वाले विशेष (सयोगी और सलेशी की .)

७. उससे १,२,३,५,६,७,१०,११,१६ इन ९ बोल वाले विशेष (संसारी की ......)

८ उससे ९,१५,१८ बोल वाले विशेष (सिघ्दो की .....)

९. उससे १४,२०,२१ बोल वाले अनंत गुणा (जीव, अजीव की....)

सेवं भते - सेवं भंते

* रुपी - अरूपी *

१. कम्मट्ठ पावठाणाय, मण वय जोगा य कम्म देहे ।
सुहुमप्पएसी रवन्धे, ए सव्वे चउफासा।।

२. घण तणवाय, घनोदहि, पुढविसतेव सतनिरीयाणं ।
असंखेज्जदिव, समुदा, कप्पा गेवीजा अणुत्तरा सिद्धि।।

३. उरालिया चउदेहा, पोगल काय छ दव्व लेस्सा य।
तहेव काय जोगेण, ए सव्वेणं अट्ठ फासा।।

४. पाव ठाणा विरइ, चउ चउ बुद्धि उग्गहे।
सन्ना धम्मत्थी पंच उठाणं, भाव लेस्साति दिट्ठीयं ।।

५. दंसण णाण सागार, अणागार चउवीसे दंडगा जीव।
ए सव्वे अरूवी, अफासगा चेव।।

छहकाय के बोल

१

१. **नामद्वार :-** इन्दि स्थावरकाय।

२. **गोत्रद्वार :-** पृथ्वीकाय (मिट्टी के जीव)।

३. **भेदद्वार :-** पृथ्वीकाय के दो भेद - १. सूक्ष्म और २ बादर।

सूक्ष्म पृथ्वीकाय सम्पूर्ण लोक मे भरे हुए है, जो काटने से कटते नही, मारने से मरते नही, जलाने से जलते नही, जो अपनी ऑखो से दिखते नही जिनको मात्र ज्ञानी ही जानते है और देखते है। उन्हे सूक्ष्म पृथ्वीकाय कहते है।

★ बादर पृथ्वीकाय के नाम :-

१. खदान की मिट्टी २. हिगलू ३. हरताल ४. खडी ५. पत्थर ६. हीरा ७. पन्ना ८. सोना ९. चादी १०. अभ्रक ११. नमक

इत्यादि बहुत प्रकार की बादर पृथ्वीकाय है।

४. **परिमाणद्वार :-** पृथ्वीकाय के एक कंकर मे असंख्यात जीव श्री भगवंत ने फरमाये है। एक ज्वार जितनी पृथ्वीकाय मे से एक-एक जीव निकलकर 'कबूतर' जितनी काया करे तो एक लाख योजन के जम्बूद्वीप मे समा नही सकते है।

५. **कुलद्वार :-** पृथ्वीकाय का कुल बारह लाख करोड है।

६. **संस्थानद्वार :-** पृथ्वीकाय का संस्थान मसूर की दाल के समान है।

७. **उपमाद्वार :-** पृथ्वीकाय हड्डीवत् कठोर है।

८. **भवद्वार :-** पृथ्वीकाय के जीव एक अन्तर्मुहूर्त मे -- जघन्य एक भव और उत्कृष्ट बारह हजार आठ सौ चौबीस (१२८२४) भव करे।

९. आयुष्यद्वार :- पृथ्वीकाय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट बावीस हजार वर्ष का है।

१०. वर्णद्वार :- पृथ्वीकाय का वर्ण पीला है।

जो जीव इन पृथ्वीकाय जीवो की दया पालेगे वे इसभव मे, परभव मे परमसाता पाते हुए अन्त मे मोक्ष के अनंत सुख प्राप्त करेगे।

२

१. नामद्वार :- बंभी स्थावरकाय।

२. गोत्रद्वार :- अप्काय (पानी के जीव)।

३. भेदद्वार :- अप्काय के दो भेद - १. सूक्ष्म और २. बादर।

★ बादर अप्काय के नाम :-

१. कुएँ का पानी २. वर्षा का पानी ३. धूंवर का पानी ४. ओले का पानी ५. ओस का पानी ६. प्राकृतिक गरम पानी ७. प्राकृतिक ठण्डा पानी ८. खट्टा पानी ९. खारा पानी १०. मीठा पानी ११. समुद्र का पानी इत्यादि बहुत प्रकार की बादर अप्काय है।

४. परिमाणद्वार :- पानी की एक बूंद मे असंख्यात जीव श्री भगवंत ने फरमाये है। जिसमें से एक-एक जीव निकलकर 'सरसव' के दाने जितनी काया करे तो एक लाख योजन के जम्बूद्वीप मे समा नही सकते है।

५. कुलद्वार :- अप्काय का कुल सात लाख करोड है।

६. संस्थानद्वार :- अप्काय का संस्थान पानी के परपोटे (बुलबुले) के समान है।

७. उपमाद्वार :- अप्काय रक्तवत् प्रवाही है।

८. भवद्वार :- अप्काय के जीव एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव, उत्कृष्ट बारह हजार आठसौ चौबीस (१२८२४) भव करे।

९. आयुष्यद्वार :- अप्काय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट सात हजार वर्ष का है।

१०. वर्णद्वार :- अप्काय का वर्ण लाल है।

जो जीव इन अप्काय जीवो की दया पालेगे वे इसभव मे, परभव मे परमसाता पाते हुए अन्त मे मोक्ष के अनंत सुख प्राप्त करेगे।

३

१. नामद्वार :- सप्पि स्थावरकाय

२. गोत्रद्वार :- तेऊकाय (अग्नि के जीव)

३. भेदद्वार :- तेऊकाय के दो भेद - १ सूक्ष्म और २. बादर

★ बादर तेऊकाय के नाम :-

१. चूल्हे की अग्नि २. भट्टी की अग्नि ३. चकमक की अग्नि ४. बिजली की अग्नि ५. आइग्लास से उत्पन्न अग्नि ६ लोहे की अग्नि ७. दीपज्वाला की अग्नि ८ कोयले की अग्नि ९ लकडी की अग्नि १०. भोभर की अग्नि ११. दावानल की अग्नि इत्यादि बहुत प्रकार की बादर तेऊकाय है।

४. परिमाणद्वार :- अग्नि की एक चिनगारी मे असंख्यात जीव श्री भगवंत ने फरमाये है। जिसमे से एक-एक जीव निकलकर 'खसखस' के दाने जितनी काया करे तो एक लाख योजन के जम्बूद्वीप मे समा नही सकते है।

५. कुलद्वार :- तेऊकाय का कुल तीन लाख करोड है।

६. संस्थान द्वार :- तेऊकाय का संस्थान सूइयो के भारे के समान है।

७. उपमाद्वार :- तेऊकाय पितवत् उष्ण है।

८. भवद्वार :- तेऊकाय के जीव एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव, उत्कृष्ट बारह हजार आठसौ चौबीस (१२८२४) भव करे।

९. आयुष्यद्वार :- तेऊकाय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन अहोरात्री का है।

१०. वर्णद्वार :- तेऊकाय का वर्ण सफेद है।

जो जीव, तेऊकाय जीवो की दया पालेंगे वे इसभव मे, परभव मे परमसाता पाते हुए अन्त मे मोक्ष के अनंत सुख प्राप्त करेगे।

४

१. नामद्वार :- सुमति स्थावरकाय।

२. गोत्रद्वार :- वायुकाय (हवा के जीव)।

३. भेदद्वार :- वायुकाय के दो भेद : १ सूक्ष्म और २ बादर।

★ बादर वायुकाय के नाम :-

१ पूर्वदिशा की वायु २. पश्चिम दिशा की वायु ३. उत्तर दिशा की वायु. ४. दक्षिण दिशा की वायु ५. ऊँची दिशा की वायु ६. नीची दिशा की वायु ७. घनवायु ८. तनवायु ९. चक्रपड़े वह भंवर वायु १० वाजित्र जैसा आवाज करे वह गुंजा वायु ११. शुद्ध वायु इत्यादि बहुत प्रकार की बादर वायुकाय है।

४. परिमाणद्वार :- खुल्ले मुंह बोलने से, पंखा चलाने से, सूपडा या कपडा झटकने से, फूंक मारने से, ताली बजाने से आदि क्रियाओ से वायुकाय के जीवो की हिसा होती है। एक बार खुल्ले मुंह बोलने से असंख्यात जीवो की हिसा होती है, उनमे से एक एक जीव निकलकर वटवृक्ष (बड) के बीज जितनी काया करे तो एक लाख योजन के जम्बूद्वीप मे समा नही सकते है।

५. कुलद्वार :- वायुकाय का कुल सात लाख करोड है।

६. संस्थानद्वार :- वायुकाय का संम्थान उडती हुई ध्वजा (पताका) के समान है।

७. उपमाद्वार :- वायुकाय प्राणवत् है।

८. भवद्वार :- वायुकाय के जीव एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट बारह हजार आठसौ चौबीस (१२८२४) भव करे।

९. आयुष्यद्वार :- वायुकाय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष का है।

१०. वर्णद्वार :- वायुकाय का वर्ण नीला है।

जो जीव इन वायुकाय जीवो की दया पालेगे वे इसभव मे, परभव मे परमसाता पाते हुए अन्त मे मोक्ष के अनंत सुख प्राप्त करेगे।

५

१. नामद्वार :- पयावच्च स्थावरकाय।

२. गोत्रद्वार :- वनस्पतिकाय (पत्ते, फूल, फल, बीज आदि)।

३. भेदद्वार :- वनस्पतिकाय के तीन भेद है। १ सूक्ष्म, २. प्रत्येक और ३ साधारण।

★ प्रत्येक वनस्पतिकाय - एक शरीर मे एक जीव हो उसे प्रत्येक वनस्पतिकाय कहते है।

प्रत्येक वनस्पतिकाय के दस भेद है .-

◆ १. मूल २. कंद ३ स्कंद ४. त्वचा (छाल) ५. शाखा ६. प्रवाल (किसलय-अंकुर) ७. पत्ते ८. फूल ९ फल १०. बीज।

◆ प्रत्येक वनस्पतिकाय के नाम :-

१. वृक्ष और वेल की जाति।

२. एकबीजा और बहुबीजा की जाति।

३. गुच्छ, गुल्म और लता की जाति।

४. आकडा और धतूरा की जाति।

५. फूल, कमल और नागरवेल की जाति।

६ ज्वार, बाजरी, मोठ, मक्का की जाति।

७. सुवा, मोगरी, बालोर (सेमी) की जाति।

८. आम, अंगुर, केला, बड़, पीपल की जाति।

इत्यादि बहुत प्रकार की प्रत्येक वनस्पतिकाय है।

प्रत्येक वनस्पति मे तीन प्रकार के जीव पाये जाते है। कुछ वनस्पति मे संख्यात जीव, कुछ वनस्पति मे असंख्यात जीव और कुछ वनस्पति मे अनंत जीव पाये जाते है।

★ साधारण वनस्पतिकाय :- एक शरीर मे अनंत जीव हो उसे साधारण वनस्पतिकाय कहते है।

◆ साधारण वनस्पतिकाय के नाम :- १. प्याज २ लहसून ३. शक्करकंद ४ अदरख ५. आलू ६. मूला ७. गाजर ८. लीलन ९ फूलन १०. उगता अंकुर ११. गीली हल्दी।

इत्यादि बहुत प्रकार की साधारण वनस्पतिकाय है।

४. परिमाणद्वार :- सूई की नोक पर रखे इतने छोटे से जमीकंद के टुकडे मे असंख्य प्रतर है। एक-एक प्रतर मे असंख्य श्रेणि है, एक-एक श्रेणि मे असंख्य गोले है, एक-एक गोले मे असंख्य शरीर है, एक-एक शरीर मे अनंत जीव है।

५. कुलद्वार :- प्रत्येक वनस्पतिकाय और साधारण वनस्पतिकाय का कुल अट्ठावीस लाख करोड है।

६. संस्थानद्वार :- वनस्पतिकाय का संस्थान अनेक प्रकार का है।

७. उपमाद्वार :- वनस्पतिकाय-नरदेहवत् (मनुष्य के समान वचपन, जवानी, बुढ़ापा)।

८. भवद्वार :- १ सूक्ष्म वनस्पतिकाय (चारो सूक्ष्म स्थावर भी) एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट पैसठ हजार पांचसौ छत्तीस (६५५३६) भव करे।

२. प्रत्येक वनस्पतिकाय एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट सोलह हजार (१६०००) भव करे।

३ साधारण वनस्पतिकाय एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट बत्तीस हजार (३२०००) भव करे।

९. आयुष्यद्वार :- १ प्रत्येक वनस्पतिकाय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट दस हजार वर्ष का है।

२. साधारण वनस्पतिकाय का आयुष्य जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है।

१०. वर्णद्वार :- वनस्पतिकाय का वर्ण काला है।

जो जीव इन वनस्पतिकाय जीवो की दया पालेगे वे इसभव मे, परभव मे परमसाता पाते हुए अन्त मे मोक्ष के अनंत सुख प्राप्त करेगे।

पृथ्वीकाय, अप्काय, तेऊकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय इन पांचो को स्थावरकाय कहते है क्योकि ये जीव अपनी इच्छा से चल-फिर नही सकते है।

६

१. नामद्वार - जंगम काय।

२. गोत्रद्वार - त्रसकाय।

३. भेदद्वार - त्रसकाय के चार भेद है।

१ बेइन्द्रिय २ तेइन्द्रिय ३. चउरिन्द्रिय ४ पंचेन्द्रिय

जो जीव अपनी इच्छा से चलते-फिरते है, उन्हे त्रसकाय कहते है।

बेइन्द्रिय - जिन जीवो को शरीर और जीभ ये दो इन्द्रिया होवे उन्हे बेइन्द्रिय कहते है।

जैसे .- शख २. सीप ३ कृमि ४ कोडी ५. लट ६ लार ७. अलसिया ८. न्हारू ९ जलोक १० पोरे (फुहारे) इत्यादि बहुत प्रकार के बेइन्द्रिय जीव है।

कुलद्वार :- बेइन्द्रिय जीवो का कुल सात लाख करोड़ का हैं।

आयुष्यद्वार :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट बारह वर्ष का हैं।

★ **तेइन्द्रिय :-** जिन जीवो को काया, जीभ और नाक ये तीन इन्द्रियां होवे उन्हे तेइन्द्रिय जीव कहते है।

जैसे :- १. जूं २. लीख ३ खटमल ४. चाचड ५. धनेरिया (घुन) ६. दीमक ७. चीटी ८ मकोडा ९. कानखजूरा १०. कुंथुए इत्यादि बहुत प्रकार के तेइन्द्रिय जीव है।

कुलद्वार :- तेइन्द्रिय जीवो का कुल आठ लाख करोड है।

आयुष्यद्वार :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट उनपचास अहोरात्री का है।

★ **चउरिन्द्रिय :-** जिन जीवो को काया, मुंह, नाक और आंख ये चार इन्द्रियां होवे उन्हे चउरिन्द्रिय कहते है।

जैसे .- १. मक्खी २. मच्छर ३. भंवरा ४. बिच्छु ५. तीड ६ पतंगा ७. डांस ८. केकडा ९. मकडी १० कंसारी (काक्रोच)

इत्यादि बहुत प्रकार के चउरिन्द्रिय जीव है।

कुलद्वार :- चउरिन्द्रिय जीवो का कुल नव लाख करोड है।

आयुष्यद्वार :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट छह माह का है।

पंचेन्द्रिय :- जिन जीवो के काया, जीभ, नाक, आंख और कान ये पांचो इन्द्रियां होवे, उन्हे पंचेन्द्रिय जीव कहते है।

१ पंचेन्द्रिय जीवो के चार भेद है - १ नारकी (के १४ भेद) २. तिर्यच (के ४८ भेद) ३. मनुष्य (के ३०३ भेद) ४. देवता (के १९८ भेद है)।

४. परिमाण द्वार :- त्रसकाय मे संख्यात-असंख्यात जीव है।

५. कुलद्वार :- १. नारकी के •२५ लाख करोड है।

२. तिर्यच के ५३।। लाख करोड है।

३. मनुष्य के १२ लाख करोड है।

४. देवता के २६ लाख करोड है।

६. संस्थानद्वार :- त्रसकाय का संस्थान विविध है।

७. उपमाद्वार :- चालकवत् (वाहन और चलानेवाले के समान त्रस का शरीर तथा आत्मा भिन्न है)।

८. भवद्वार :- १. बेइन्द्रिय के जीव एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट अस्सी (८०) भव करे।

२ तेइन्द्रिय के जीव एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट साठ (६०) भव करे।

३ चउरिन्द्रिय के जीव एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट चालीस (४०) भव करे।

४. असंज्ञी पंचेन्द्रिय एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट चौबीस (२४) भव करे।

५ सज्ञी पंचेन्द्रिय एक अन्तर्मुहूर्त मे जघन्य एक भव करे, उत्कृष्ट एक भव करे।

९. आयुष्यद्वार :- पचेन्द्रिय का आयुष्य -

नारकी और देवता का आयुष्य जघन्य दस हजार वर्ष, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम का है।

मनुष्य और तिर्यच का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन पल्योपम का है।

१०. वर्णद्वार :- त्रसकाय का वर्ण विविध प्रकार का है।

जो जीव इन त्रसकाय जीवो की दया पालेगे वे इसभव मे, परभव मे परमसाता पाते हुए अन्त मे मोक्ष के अनत सुख प्राप्त करेगे।

सेव भते - सेव भते

जम्बूद्वीप

उत्तर

अन्तर द्वीप

अन्तर द्वीप

विप्रा विजय

पुष्कलावती विजय

३ ऐरावत १ २

००००००० वैताढ्य गिरि ००००

७ ५ ४ ६ ७

शिखरी पर्वत

हिरण्यवत युगलिक

रुक्मी पर्वत

रम्यकवास युगलिक

नीलवंत पर्वत

पश्चिम

पूर्व

(२५) २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ उत्तरकुरु १ २ ३ ४ ५ ६ ७ (८)

मेरु विदेह

(२४) २३ २२ २१ २० १९ १८ १७ देवकुरू १६ १५ १४ १३ १२ ११ १० (९)

निषध पर्वत

हरिवास युगलिक

महाहिमवन्त

हेमवय युगलिक

चूलहिमवन्त

३ ४ ५

७ ७

००००० वैताढ्य गिरि ००००००००००

२ १ भरत ६

अन्तर द्वीप

अन्तर द्वीप

सलीलावती विजय

वत्स विजय

दक्षिण

(८) - पुष्कलावती विजय मे सीमंधर स्वामी है।

(९) - वत्स विजय में सुबाहु स्वामी है।

(२५) - विप्रा विजय में युगमंधर स्वामी है।

(२८)

, - सलीलावती में बाहु स्वामी है।

व्यवहार समकित के ६७ बोल

इस पर बारह द्वार :- (१) श्रद्धान ४ (२) लिग ३ (३) विनय १० (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दूषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) यतना ६ (११) स्थान ६ (१२) भावना ६

पहले बोले **※ श्रद्धान चार ※**

१. परमार्थ का परिचय करे अर्थात नव तत्व का ज्ञान प्राप्त करे।

२. परमार्थ के जानने वालो की सेवा करे।

३. जिसने सम्यक्त्व का वमन कर दिया (छोड दिया) हो, उसकी संगति नही करे।

४. कुतीर्थियो की सगति से दूर रहे।

दूसरे बोले **※ लिंग तीन ※**

१. जैसे तरुण पुरुष राग रंग मे अनुराग रखता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी मे अनुरक्त रहे।

२. जैसे तीन दिन का भूखा मनुष्य, मिष्ठान्न का भोजन रुचि सहित करता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी आदर सहित सुने।

३. जैसे अनपढ को पढने की चाह रहती है और पढ़ने का सुयोग मिलते ही हर्षित हो पढता है, उसी प्रकार वीतराग की वाणी सुनकर हर्षित हो उद्यम करता है।

तीसरे बोले **※ विनय दस ※**

१. अरिहत भगवान की विनय-भक्ति करे।

२. सिद्ध भगवान की विनय-भक्ति करे।

३ आचार्य महाराज की विनय-भक्ति करे।

४. उपाध्याय महाराज की विनय-भक्ति करे।

५. स्थविर महाराज की विनय-भक्ति करे।

६. कुल (गुरुभाई) की विनय-भक्ति करे।

७. गण (सम्प्रदाय) की विनय-भक्ति करे।

८. चतुर्विध संघ (साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका) की विनय-भक्ति करे।

९. स्वधर्मी की विनय-भक्ति करे।

१०. क्रियावान् की विनय-भक्ति करे।

चौथे बोले **※ शुद्धि तीन ※**

१. मनशुद्धि :- मन से वीतराग देव का ध्यान करे, परन्तु किसी अन्य देव को मन मे नही लावे।

२. वचनशुद्धि :- वचन से वीतराग देव के गुणग्राम करे, किन्तु किसी अन्य देव की प्रशंसा नही करे।

३. कायाशुद्धि :- काया से वीतराग देव को वंदना नमस्कार करे, परन्तु किसी अन्य देव को नही करे।

पांचवे बोले **※ लक्षण पांच ※**

१. शम 'प्रशम' :- अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ का उदय न होना।

सम : शत्रु-मित्र पर समभाव रखना।

२. संवेग :- वैराग्य भाव-मोक्ष की अभिलाषा होना।

३. निर्वेद :- आरम्भ-परिग्रह से निवृत्त होना। संसार से उदासीन होना।

※ 'संवेग' - मोक्ष की तरफ वेग।

※ निर्वेद - संसार से अरूचि।

४. अनुकम्पा :- दूसरे जीव को दुःखी देखकर दया आना।

५. आस्था :- जिन वचन पर दृढ विश्वास रखना।

छट्ठे बोले **※ भूषण पाँच ※**

१ जिन-शासन मे निपुण होवे (सुबुद्धि सा चातुर्य)।

२ जिन-शासन की प्रभावना करे और उनके गुणो को दीपावे प्रकट करे (धन्ना सी करणी)।

३. जिन-शासन को माननेवाले साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप धर्म-तीर्थ की सेवा भक्ति करे (नन्दीषेण सी सेवा)।

४ अन्य जीवो को धर्म मे स्थिर करे और जिन मार्ग मे चतुर हो (कामदेव सा धैर्य)।

५. जिन-प्रवचन एवं गुणवानो का आदर-सत्कार एवं महिमा करे (सिहमुनि सी भक्ति)।

सातवे बोले **※ दूषण पाँच ※**

१ शका - जिन भगवान के वचनो मे संदेह रखना दोष है।

२ कंखा - अन्यमतियो के आडम्बर देखकर उनकी चाहना करना दोष है।

३ वितिगिच्छा - करणी के फल मे संदेह रखना अथवा साधु-साध्वी के मलिन वस्त्र देखकर घृणा करना दोष है।

४ पर पाखण्डी प्रशंसा - अन्यतीर्थियो की प्रशंसा करना दोष है।

५ पर पाखण्डी संस्तव - अन्यतीर्थियो के साथ आवागमन रखना और उनकी संगति करना दोष है।

आठवे बोले **※ प्रभावना आठ ※**

१. सूत्र ज्ञान से - जिस काल मे जितने सूत्र हो, उन्हे गुरुभगवंतो से जानकर शासन की प्रभावना करे।

२. धर्मकथा से - धर्मकथा, व्याख्यान आदि द्वारा शासन की प्रभावना करे।

३. विकट तप से - विकट (उग्र) तपस्या करके शासन की प्रभावना करे।

४. ज्ञान से - तीन काल अथवा तीन मत का ज्ञाता होवे।

५. वाद चर्चा से - तर्क, वितर्क, हेतु, वाद, युक्ति, न्याय तथा विद्यादि बल से वादियो को शास्त्रार्थ मे पराजय करके शासन की प्रभावना करे।

६. विकट त्याग से - पुरुषार्थी पुरुष दीक्षा लेकर शासन की प्रभावना करे।

७. गद्य-पद्य रचना से - कविता करने की शक्ति होवे तो कविता करके शासन की प्रभावना करे।

८. विकट शील से - ब्रह्मचर्य आदि कोई बडा व्रत लेना होवे तो सभा मे लेवे। जिससे लोगो को शासन पर श्रद्धा हो तथा व्रत लेने की रुचि बढ़े।

नौवे बोले **❊ आगार छह ❊**

१. राजा के दबाव से अन्यतीर्थी को वन्दनादि करनी पड़े, तो सम्यक्त्व मे दोष लगता है, परन्तु भंग नही होता।

२. कुटुम्ब, जाति, पंच आदि के दबाव से अन्यतीर्थी को वन्दनादि करनी पड़े, तो सम्यक्त्व में दोष लगता है, परंतु भंग नही होता।

३. बलवान के डर से अन्यतीर्थी को वन्दनादि करनी पडे तो सम्यक्त्व मे दोष लगता है, भंग नही होता।

४. देव के डर से अन्यतीर्थी को वंदनादि करनी पडे, तो सम्यक्त्व दोष लगता है, परंतु भंग नही होता।

५. माता-पिता-गुरु आदि के आग्रह से अन्यतीर्थी को वन्दनादि करनी पडे, तो सम्यक्त्व मे दोष लगता है, परतु भग नही होता।

६. दुर्भिक्ष काल मे आजीविका होना कठिन हो जाय और न चाहते हुए भी अन्यतीर्थी को वन्दनादि करनी पड़े, तो सम्यक्त्व मे दोष लगता है, परंतु भंग नही होता।

दसवे बोले ※ **यतना छह** ※

१. **आलाप** - मिथ्यात्वी से बिना कारण नही बोले और सम्यग्दृष्टि से बिना बोलाये भी ज्ञान चर्चा करे।

२. **संलाप** - मिथ्यात्वी से विशेष भाषण नही करे और सम्यग्दृष्टि से बारबार अवश्य ज्ञान चर्चा करे।

३. **दान** - मिथ्यात्वी को गुरुबुद्धि से दान नही देवे। अनुकंपा दान देने की तीर्थकर भगवान की मनाई नही है।

४. **मान** - मिथ्यात्वी का अधिक आदर सम्मान नही करे और सम्यक्त्वी का बहुत आदर सम्मान करे।

५. **वन्दना** - मिथ्यात्वी को वन्दना नही करे।

६. **गुणग्राम** - मिथ्यात्वी के गुणो की प्रशंसा नही करे और सम्यक्त्वी के गुणो की प्रशंसा करे।

ग्यारहवे बोले ※ **भावना छह** ※

१ जीव है और जीव का लक्षण चेतना है।

२. जीव द्रव्य नित्य-शाश्वत है।

३. जीव आठ कर्मो का कर्ता है।

४. जीव आठ कर्मो का भोक्ता है।

५. भव्य जीव कर्मो को क्षय कर मोक्ष प्राप्त कर लेते है।

६ सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्चारित्र ये मोक्ष के उपाय है।

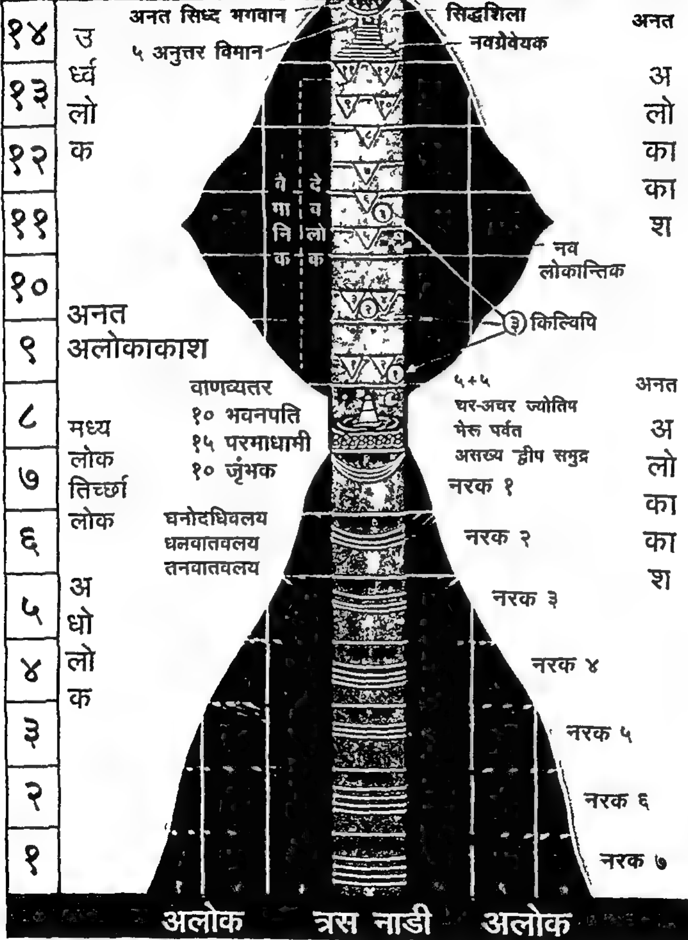
※ स्थान छह ※

१. धर्म रूपी वृक्ष की सम्यक्त्व रूपी जड़ है।
२. धर्म रूपी नगर की सम्यक्त्व रूपी फाटक है।
३. धर्म रूपी महल की सम्यक्त्व रूपी नीव है।
४. धर्म रूपी आभूषणो की सम्यक्त्व रूपी पेटी है।
५. धर्म रूपी वस्तुओ की सम्यक्त्व रूपी दुकान है।
६. धर्म रूपी भोजन की सम्यक्त्व रूपी थाल है।

सेवं भते - सेव भंते

* महापापी *

१ आत्म - घाती
२. विश्वास-घाती
३. गुरू - द्रोही
४. कृतघ्नी
५ झूठी सलाह देनेवाला
६. झूठी साक्षी देनेवाला
७. हिसा मे धर्म बतानेवाला
८. सरोवर की पाल तोडने वाला
९. जंगल मे आग लगाने वाला
१०. हराभरा वन कटानेवाला
११. बाल-हत्या करनेवाला
१२. सती-साध्वी का शील भग करनेवाला



विश्व दर्शन १४ राजलोक
अनत अलोक
लोकाग्रभाग
अनत सिध्द भगवान
सिद्धशिला
५ अनुत्तर विमान
नवग्रैवेयक
अनत
उर्ध्व लोक
अलोकाकाश
वैमानिक
देवलोक
नव लोकान्तिक
(३) किल्विपि
अनत अलोकाकाश
१४
१३
१२
११
१०
९
८
७
६
५
४
३
२
१
वाणव्यंतर
१० भवनपति
१५ परमाधामी
१० जृंभक
५+५
चर-अचर ज्योतिष
मेरू पर्वत
असंख्य द्वीप समुद्र
अनत
अलोकाकाश
मध्य लोक तिर्च्छा लोक
नरक १
घनोदधिवलय
घनवातवलय
तनवातवलय
नरक २
नरक ३
अधो लोक
नरक ४
नरक ५
नरक ६
नरक ७
अलोक
त्रस नाडी
अलोक

चार ध्यान

उववाई सूत्र

ध्यान के चार भेद - आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान।

१. आर्तध्यान के चार पाये :- १. मनोज्ञ वस्तु का संयोग चितवे। २. अमनोज्ञ वस्तु का वियोग चितवे। ३. रोगादि अनिष्ट का वियोग चितवे। ४. परभव के सुख के लिए निदान करे।

आर्तध्यान के चार लक्षण :- १. चिन्ता-शोक करना (मन से)। २. अश्रुपात करना (ऑख से)। ३. आक्रन्दन करना (विलापात-शब्दपूर्वक रोना - मुख से)। ४. छाती-माथा आदि कूटकर रोना (काया से)।

२. रौद्र ध्यान के चार पाये :- १ हिसा मे आनन्द। २. झूठ मे आनन्द। ३. चोरी मे आनन्द। ४. कारागृह मे फंसाने मे आनन्द।

★ पाप करने और कराने मे आनन्द माने।

रौद्रध्यान के चार लक्षण :- १. तुच्छ अपराध पर बहुत क्रोध करना या द्वेष रखना। २. बडे अपराध पर बारबार अत्यन्त क्रोध करना या अत्यन्त द्वेष करना। ३. अज्ञानता से द्वेष रखना। ४. यावत् जीवन तक द्वेष रखना।

३. धर्मध्यान के चार पाये :- १. तीर्थकर की आज्ञा का चितन करना। २. कर्म आने के कारणो (आश्रव) का चितन करना। ३. शुभाशुभ कर्म विपाक (फल) का चितन करना। ४ लोक संस्थान का चितन करना।

धर्मध्यान के चार लक्षण :- १. (तीर्थकर की) आज्ञा रुचि। २. निसर्ग रुचि। ३. उपदेश रुचि। ४. सूत्र-सिद्धान्त (आगम) रुचि।

धर्मध्यान के चार अवलम्बन :- १. वाचना (अभ्यास लेना)। २ पृच्छना (अभ्यास विषयक शंकाओ का समाधान करना)। ३. परावर्तना

(अभ्यास को पक्का करने दुहराना)। ४. धर्मकथा (सीखा हुआ अभ्यास भव्य जीवो को सुनाना)।

धर्मध्यान की चार अनुप्रेक्षा (विचारणा-चिन्तवना) :-

१. एगच्चाणुपेहा :- जीव अकेला आया है और अकेला जायेगा, ऐसे जीव के एकत्त्वपने का विचार करना।

२. अणिच्चाणुपेहा :- संसार की अनित्यता का विचार करना।

३. असरणाणुपेहा :- संसार मे कोई किसी को शरण देनेवाला नही है; ऐसा विचार करना।

४. संसाराणुपेहा :- संसार की स्थिति (दशा) का विचार करना।

४. शुक्ल ध्यान के चार पाये :- १. एक-एक द्रव्य मे भिन्न-भिन्न अनेक पर्याय उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य आदि भावो का विचार करना।

२. अनेक द्रव्यो मे एक भाव (अगुरूलघु) का विचार करना।

३. तेरहवे गुणस्थान के अन्त मे तीनो योगो का निरोध करना।

४. चौदहवे गुणस्थान के पहले सूक्ष्म क्रिया से भी निवर्तना।

शुक्लध्यान के चार लक्षण :- १. देव आदि के उपसर्ग से चलित न होना। २. धर्म के सूक्ष्म भाव सुनकर ग्लानि न लावे। ३. शरीर और आत्मा का भिन्न-भिन्न चितन करना। ४. शरीर और पुद्गल को अनित्य एवं पर वस्तु समझकर इनका त्याग करना।

शुक्ल ध्यान के चार अवलम्बन :- १. क्षमा। २. निर्लोभता। ३. निष्कपटता। ४. मदरहितता।

शुक्ल ध्यान की चार अनुप्रेक्षा :- १. अनंतवर्तिता अनुप्रेक्षा :- जीव अनंत काल से संसार मे परिभ्रमण कर रहा है, ऐसा विचार करना।

२. विपरिणाम अनुप्रेक्षा :- संसार के समस्त पौद्गलिक पदार्थ अनित्य है तथा शुभ पुद्गल, अशुभ रूप से और अशुभ पुद्गल, शुभ

रूप से परिणमते है। अतः इन शुभाशुभ पुद्‌गलो मे आसक्त बनकर राग - द्वेष नही करना, ऐसा विचार करना।

३. अशुभ अनुप्रेक्षा :- संसार परिभ्रमण का मूल कारण शुभाशुभ कर्म है और कर्मबन्ध का मूल कारण चार हेतु (क्रोध, मान, माया, लोभ) है, ऐसा विचार करना।

४. अपाय अनुप्रेक्षा :- कर्मबन्ध के हेतुओ को छोडकर संयम-तप मे रमण करने का विचार करना। तथा ऐसे विचारो मे तन्मय हो जाना शुक्लध्यान है।

सेव भंते - सेवं भंते

* शृंगार *

१. शरीर का शृंगार शील, २. शील का शृंगार तप,
३. तप का शृंगार क्षमा, ४. क्षमा का शृंगार ज्ञान,
५. ज्ञान का शृंगार मौन, ६. मौन का शृंगार शुभ ध्यान,
७ शुभ ध्यान का शृंगार संवर, ८. संवर का शृंगार निर्जरा,
९ निर्जरा का शृंगार केवलज्ञान, १०. केवलज्ञान का शृंगार अक्रिया,
११. अक्रिया का शृंगार मोक्ष और, १२. मोक्ष का शृंगार अव्याबाध सुख

पांच समिति - तीन गुप्ति

(अष्ट प्रवचनमाता) उत्तरा. सूत्र के २४ वे अ. मे।

पाँच समिति (यतना, सावधानी) के नाम :- १ इर्या (मार्ग मे चलने की) समिति २. भाषा (बोलने की) समिति. ३ एषणा (गौचरी की) समिति, ४. निक्षेपणा (आदान-भण्ड मत्त निक्खेवणा - वस्त्र, पात्र आदि उठाने व रखने की) समिति, ५. परिठावणिया (उच्चार - बडीनीत, पासवण - लघुनीत, खेल-खेकार, सिघाण-श्लेष्म, जल-शरीर का मेल आदि परठने की) समिति।

तीन गुप्ति (सुरक्षा-गोपना) के नाम :- १ मनगुप्ति, २. वचनगुप्ति, ३. कायागुप्ति।

१. इर्या समिति के चार भेद :- १. आलम्बन - ज्ञान, दर्शन, चारित्र का। २. काल - अहोरात्रि का। ३. मार्ग - कुमार्ग छोडकर सुमार्ग पर चलना। ४. यत्ना - (विवेक-सावधानी) के चार भेद-द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव।

द्रव्य से :- छः काय जीवो की यतना करके चले।

क्षेत्र से :- धूसरा प्रमाण (३।। हाथ लगभग) जमीन आगे देखते हुए चलना।

काल से :- दिन मे देखकर और रात्रि मे पूंजकर चलना।

भाव से :- रास्ते-चलते वाचना (नया पाठ लेना), पृच्छना (प्रश्नोत्तर करना), परियट्टणा (अभ्यास फेरना), अणुप्पेहा (चिन्तन करना) और धर्मकथा आदि न करे और शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श आदि विषयो मे ध्यान नही देना।

२. भाषा समिति के चार भेद :- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव।

द्रव्य से :- आठ प्रकार की भाषा १. कर्कशकारी, २. कठोरकारी, ३. छेदकारी, ४. भेदकारी, ५. मर्मकारी, ६. मृषाकारी, ७ सावद्यकारी, ८ निश्चयकारी भाषा नही बोलना।

क्षेत्र से ·- रास्ते चलते नही बोलना।

काल से :- एक प्रहर रात बीतने पर जोर से नही बोलना।

भाव से :- राग-द्वेष युक्त भाषा नही बोलना।

३. एषणा समिति के चार भेद :- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्य से :- ४२ तथा ९६ दोष टालकर निर्दोष और प्रासुक आहार, पानी, वस्त्र, पात्र और मकान आदि की याचना करना - भोगना।

क्षेत्र से :- दो गाउ (कोस) उपरान्त ले जाकर आहार-पानी नही भोगना।

काल से .- प्रथम प्रहर का आहार-पानी चौथे प्रहर मे नही भोगना।

भाव से :- पॉच दोष (संयोग, इंगाल, धूम, परिमाण और कारण) टालकर अनासक्तता से भोगना।

४. आदान भण्ड मत्त निक्खेवणिया समिति :- मुनियो के उपकरण ये है - मुंहपत्ति, रजोहरण, पूंजणी, चादर, चोलपट्टा, आसन, पात्र आदि संयम मे आवश्यक उपकरण।

निक्षेपणा समिति के चार भेद :- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव।

द्रव्य से - ऊपर कहे उपकरण यत्ना से उठावे, रक्खे और काम मे लेवे।

क्षेत्र से - व्यवस्थित रक्खे, जहॉ तहॉ बिखरे हुए नही रक्खे (गृहस्थ के घर नही रक्खे)।

काल से :- पहले और चौथे प्रहर मे प्रतिलेखन करे तथा प्रमार्जन करे।

भाव से :- ममता रहित होकर, संयम का साधन समझकर भोगवे।

५. उच्चार, पासवण, खेल, जल, सिंघाण, परिठावणिया समिति:- परठने योग्य भूमि - १. जहाँ मनुष्यो का आवजाव न हो। २. जीवो की जहाँ उपघात न हो। ३. विषम (ऊँची-नीची) भूमि न हो। ४. पोली भूमि न हो। ५. सचित भूमि न हो। ६. सकड़ा स्थान न हो। ७. दीर्घकाल की अचित भूमि न हो। तुरंत की अचित भूमि ही हो (क्योकि दीर्घकाल की अचित भूमि मे अन्य बेइन्द्रियादि जीवो की उत्पत्ति सम्भव है)। ८. नगर या गाँव के निकट की भूमि न हो ९. लीलण-फूलण युक्त भूमि न हो। १०. बिल-दर आदि युक्त भूमि न हो।

परिठावणिया समिति के चार भेद :- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव।

द्रव्य से :- मलमूत्र आदि उपरोक्त १० प्रकार की निर्दोष भूमि पर ही परठे, सदोष भूमि पर नही परठे।

क्षेत्र से :- बस्ती को दुगुंछा (घृणा) उत्पन्न हो ऐसे स्थान तथा आम रास्ते पर नही परठे।

काल से :- परठने की भूमि का कालोकाल प्रतिलेखन करे तथा दिन मे देखकर एवं रात मे पुंजकर परठे। भाव से - परठने या बैठने के पहले "शक्रेन्द्र महाराज की आज्ञा मांगे" परठने या उठने के बाद "वोसिरामि" तीन बार कहे। लौटकर स्थान पर आते "निस्सही" तीन बार बोले। जल्दी सूख जावे इस तरह परठे।

मन गुप्ति के चार भेद :- द्रव्य से :- आरम्भ-समारम्भ मे मन प्रवर्तावे नही। क्षेत्र से :- समस्त लोक मे (जहाँ भी रहे वहाँ)। काल से :- जावजीव। भाव से :- विषय, कषाय, आर्त, रौद्र, राग, द्वेष आदि मे मन नही प्रवर्तावे।

वचन गुप्ति के चार भेद :- द्रव्यसे :- चार प्रकार की विकथा नही करे।

क्षेत्र से :- समस्त लोक मे। काल से :- जावजीव। भाव से :- सावद्य (राग, द्वेष, विषय, कषाय युक्त) वचन नही बोले।

काय गुप्ति के चार भेद :- द्रव्य से :- शरीर की सुश्रुषा (शोभा) नही करे। क्षेत्र से :- समस्त लोक मे। काल से :- जावजीव। भाव से :- पापकारी कार्य (सावद्य प्रवृत्ति) नही करे।

समिति का आशय है - सावधानी (यतना) से प्रवृत्ति करना, और गुप्ति का आशय है - तीनो योगों को गोपना - रोकना (प्रवृत्ति से निवृत्त होना)

आठ प्रवचन माता का जो सम्यक् प्रकार से आचरण करता है, वह बुद्धिमान साधु, संसार से शीघ्र मुक्त हो जाता है।

सेव भते - सेव भते

* इहभव परभव *

प्र. - अहो भ.। ज्ञान, दर्शन, चरित्र, तप इहभविक है, परभविक है या तदुभविक है ?

उ. - हे गौ। ज्ञान + दर्शन इहभविक भी है, परभविक भी है, तदुभविक भी है।

चारित्र + तप इहभविक है, परभविक नही, तदुभविक नही।

आठ कर्म के फल

इस भव में	आते भव में
(१) पढ़े नही, पढने दे नही तो –	मूर्ख, ठोठ, पागल बने।
पढे, पढ़ने मे सुविधा दे तो –	बुद्धीमान, चतुर, चकोर बने।
(२) नीद ले, दर्शन नही करे तो –	अधा, एकेन्द्रिय बने।
जागरण करे, देखकर चले तो –	अच्छी ऑख, तीव्र दृष्टि वाला बने।
(३) निर्दयी हो, दूसरो को दु:ख दे तो –	रोगी, दु:खी बने।
दयावन्त हो, दूसरो को साता दे तो –	निरोगी, अवेदन बने।
(४) माया-मिथ्यात्वी हो तो –	अनार्य, म्लेच्छ, विधर्मी बने।
समकिती, चारित्रवंत हो तो –	आर्य, संस्कारी, सुधर्मी बने।
(५) मांसाहारी, व्यसनी हो तो –	नरक, तिर्यच मे उपजे।
अन्नाहारी, साधु, श्रावक हो तो –	मनुष्य, देव बने।
(६) वांका देखे-बोले-चाले तो –	वामन, कुबडा, विकलांग बने।
अच्छा देखे-बोले-चाले तो –	सुस्वर, सौंदर्यवान, प्रभावी बने।
(७) अभिमान करे, अपमान करे तो –	दास, दुर्भागी, किल्वीषी बने।
विनयंवान हो, दूसरो को आदर दे तो –	राजा, नेता, स्वामी, इन्द्र बने।
(८) न खाये–न खिलावे, आलसी हो तो –	नग्न, भूखा, प्यासा बने।
खाये–खिलावे और उद्यमी हो तो –	सम्पन्न, दानी, भोगी, वीर्यवन्त बने।

सेव भते - सेवं भंते

कर्म प्रकृति (आठ कर्म)

उत्तराध्ययन सूत्र के ३३ वे अध्ययन मे

प्रश्न होता है, जीवात्मा अनंत शक्ति सम्पन्न होकर भी दीन-हीन एवं दुःखी क्यो है? उत्तर होगा, कर्म के संयोग से। जैसे शांत और स्वच्छ जल भी अग्नि एवं मिट्टी के संयोग से गर्म और मलिन हो जाता है। ऐसे ही कर्मवश आत्मा बना हुआ है।

जीव के साथ कर्म का संबंध सोना और मिट्टी की तरह अनादिकालीन है।

प्रथम कर्म

१. नाम द्वार :- ज्ञानावरणीय कर्म

२. लक्षण द्वार :- वस्तु के विशेष धर्म को जानना 'ज्ञान' कहलाता है और जिसके द्वारा आत्मा का ज्ञान गुण ढंक जाय, उसे 'ज्ञानावरणीय कर्म' कहते है। जैसे :- बादलो से सूर्य ढक जाता है।

३. प्रकृति द्वार :- ज्ञानावरणीय कर्म की पांच प्रकृतियाँ है :-

१ मतिज्ञानावरणीय २ श्रुतज्ञानावरणीय ३. अवधिज्ञानावरणीय ४. मनःपर्यवज्ञानावरणीय ५. केवलज्ञानावरणीय।

४. बंध द्वार :- ज्ञानावरणीय कर्म छ. प्रकार से बंधता है :-

(१) **नाणप्पडिणियाए :-** ज्ञान और ज्ञानी का विरोध और निंदा करने से।

(२) **नाणनिन्हवणियाए :-** ज्ञानदाता का नाम और उपकार छिपाने से।

(३) **नाणअन्तराएणं :-** ज्ञान प्राप्त करने मे अन्तराय देने से।

(४) **नाणप्पओसेणं :-** ज्ञान और ज्ञानी से द्वेष करने से।

(५) **नाणआसायणाए :-** ज्ञान और ज्ञानी की आशातना करने से।

(६) **नाणविसंवायणा जोगेणं :-** ज्ञानी से झूठा विवाद करने से।

५. उदय (फल) द्वार :- ज्ञानावरणीय कर्म दस प्रकार से भोगा जाता है :-

१. श्रोतआवरण	२. श्रोत विज्ञान आवरण
३. चक्षुआवरण	४. चक्षु विज्ञान आवरण
५. घ्राणआवरण	६. घ्राण विज्ञान आवरण
७. रसनाआवरण	८. रसना विज्ञान आवरण
९. स्पर्शआवरण	१०. स्पर्श विज्ञान आवरण

६. स्थिति द्वार :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष का।

दूसरा कर्म

१. नाम द्वार :- दर्शनावरणीय कर्म।

२. लक्षण द्वार :- वस्तु के सामान्य धर्म को जानना 'दर्शन' कहलाता है और जिसके द्वारा आत्मा का दर्शन गुण ढंक जाय, उसे 'दर्शनावरणीय कर्म' कहते है।

जैसे :- द्वारपाल के रोक देने पर राजा के दर्शन नही हो पाते।

३. प्रकृति द्वार :- दर्शनावरणीय कर्म की नौ प्रकृतियाँ है :-

(१) निद्रा :- सुख से सोवे और सुख से जागे।

(२) निद्रानिद्रा :- दुःख से सोवे और दुःख से जागे।

(३) प्रचला :- बैठे-बैठे नीद आवे।

(४) प्रचला-प्रचला :- चलते-फिरते नीद आवे।

(५) स्त्यानगृद्धि (थीणद्धि) :- जागृत अवस्था मे सोचा हुआ कार्य सुप्त अवस्था मे कर डाले।

(६) चक्षुदर्शनावरणीय। (७) अचक्षुदर्शनावरणीय।

(८) अवधिदर्शनावरणीय। (९) केवलदर्शनावरणीय।

४. बंध द्वार :- दर्शनावरणीय कर्म छः प्रकार से बंधता है :-

(१) सुदर्शन और सुदर्शनी का विरोध और निंदा करने से।

(२) सुदर्शन दाता का नाम और उपकार छिपाने से।

(३) सुदर्शन प्राप्त करने मे अन्तराय देने से।

(४) सुदर्शन और सुदर्शनी से द्वेष करने से।

(५) सुदर्शन और सुदर्शनी की आशातना करने से।

(६) सुदर्शनी से झूठा विवाद करने से।

५. उदय (फल) द्वार :- दर्शनावरणीय कर्म ९ प्रकार से भोगा जाता है। प्रकृति के अनुसार समझना।

६. स्थिति द्वार :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीस कोडाकोडी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष का।

तीसरा कर्म

१. नाम द्वार :- वेदनीय कर्म

२. लक्षण द्वार :- जिस कर्म के उदय से जीव को भौतिक साता (सुख) और असाता (दु:ख) का अनुभव हो उसे 'वेदनीय कर्म' कहते है।

जैसे :- शहद लिपटी तलवार को चाटने से अल्पसुख और जीभ कटने से अधिक दु:ख होता है।

३. प्रकृति द्वार :- वेदनीय कर्म की दो प्रकृतियाँ है।

१. साता वेदनीय २ असाता वेदनीय।

४. बंध द्वार :- वेदनीय कर्म २२ प्रकार से बंधता है।

* सातावेदनीय कर्म दस प्रकार से बंधता है :-

१. प्राण – बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय जीवो की अनुकम्पा करने से।

२. भूत - वनस्पतिकाय के जीवो की अनुकम्पा करने से।

३. जीव - पंचेन्द्रिय जीवो की अनुकम्पा करने से।

४. सत्त्व - पृथ्वीकाय, अप्काय, तेऊकाय और वायुकाय जीवो की अनुकम्पा करने से।

५ उपरोक्त जीवो को दु:ख नही देने से।

६. शोक उत्पन्न नही कराने से। ७. नही झुराने से।

८. नही रूलाने से। ९. मारपीट नही करने से।

१०. परिताप नही देने से।

* असाता वेदनीय कर्म १२ प्रकार से बंधता है :-

१. प्राण, भूत, जीव और सत्त्व को दुःख देने से। २. शोक कराने से। ३. झूराने से। ४. रुलाने से। ५. मारपीट करने से। ६. परिताप उत्पन्न कराने से। ७. बहुत दु:ख देने से। ८. बहुत शोक कराने से। ९. बहुत झुराने से। १०. बहुत रूलाने से। ११. बहुत मारपीट करने से। १२. बहुत परिताप उत्पन्न कराने से।

५. उदय (फल) द्वार :- वेदनीय कर्म १६ प्रकार से भोगा जाता है।

(१) साता वेदनीय कर्म आठ प्रकार से भोगा जाता है :-

१ मनोज्ञ शब्द २. मनोज्ञ रूप ३. मनोज्ञ गंध ४. मनोज्ञ रस ५. मनोज्ञ स्पर्श ६. मन का सुख ७. वचन का सुख ८ काया का सुख।

(२) असातावेदनीय कर्म आठ प्रकार से भोगा जाता है :-

१. अमनोज्ञ शब्द २. अमनोज्ञ रूप ३. अमनोज्ञ गंध ४. अमनोज्ञ रस ५. अमनोज्ञ स्पर्श ६ मन का दुःख ७. वचन का दु्ख ८. काया का दुःख।

६. स्थिति द्वार :- (१) सातावेदनीय कर्म की स्थिति .- ईर्यापथिक की अपेक्षा जघन्य दो समय, साम्परायिक की अपेक्षा

जघन्य १२ मुहूर्त, उत्कृष्ट १५ कोड़ाकोडी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट डेढ हजार वर्ष का।

(२) असातावेदनीय कर्म की स्थिति :-

जघन्य एक सागर के सात हिस्से मे से तीन हिस्से और एक पल्य का असंख्यातवॉ भाग कम, उत्कृष्ट तीस कोड़ाकोडी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष का।

चौथा कर्म

१. नाम द्वार :- मोहनीय कर्म

२. लक्षण द्वार :- जिस कर्म के उदय से जीव मोहित हो जाय उसे 'मोहनीय कर्म' कहते है।

जैसे :- मदिरा पीने से मनुष्य भले-बुरे का भान भूल जाता है।

३. प्रकृति द्वार :- मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियॉ है :-

मुख्य दो है .- दर्शन मोहनीय और चारित्र मोहनीय।

★ दर्शन मोहनीय के तीन भेद :-

१. मिथ्यात्वमोहनीय २. सम्यकत्वमोहनीय ३. मिश्र मोहनीय।

★ चारित्रमोहनीय के दो भेद :-

१. कषाय मोहनीय २. नोकषाय मोहनीय।

(क) कषाय मोहनीय के १६ भेद :-

१ **अनंतानुबंधी** क्रोध २. मान ३. माया ४. लोभ

५. **अप्रत्याख्यानी** क्रोध ६ मान ७. माया ८. लोभ

९. **प्रत्याख्यानावरणीय** क्रोध १०. मान ११ माया १२. लोभ

१३. **संज्वलन** क्रोध १४ मान १५. माया १६ लोभ

(ख) नोकषाय मोहनीय के ९ भेद --

१. हास्य २ रति ३. अरति ४. भय ५. शोक ६. जुगुप्सा

(घृणा) ७. स्त्रीवेद ८. पुरुषवेद ९. नपुंसक वेद।

(३ + १६ + ९ = २८)

४. बंध द्वार :- मोहनीय कर्म छः प्रकार से बंधता है :-

१. तीव्र क्रोध २. तीव्र मान ३. तीव्र माया ४. तीव्र लोभ ५ तीव्र दर्शन मोहनीय ६. तीव्र चारित्र मोहनीय।

५. उदय (फल) द्वार :- मोहनीय कर्म २८ प्रकार से भोगा जाता है।

प्रकृतियों के अनुसार समझना।

६. स्थिति द्वार :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट सात हजार वर्ष का।

पांचवा कर्म

१. नामद्वार :- आयुष्य कर्म

२. लक्षण द्वार :- जिस कर्म के उदय से जीव चार गतियो मे रुका रहे उसे 'आयुष्य कर्म' कहते है।

जैसे :- बेड़ी मे जकड़ा पुरुष इच्छानुसार घूम-फिर नही सकता।

३. प्रकृति द्वार :- आयुष्य कर्म की चार प्रकृतियॉ :-

(१) नरक आयु (२) तिर्यच आयु (३) मनुष्य आयु (४) देव आयु।

४. बंध द्वार :- आयुष्य कर्म १६ प्रकार से बंधता है .-

★ नरक आयु चार प्रकार से बंधता है :-

(१) महाआरंभ करे (२) महापरिग्रह रखे (३) मदिरा-मांस का आहार करे (४) पंचेन्द्रिय जीवो की हत्या करे।

★ तिर्यच आयु चार प्रकार से बंधता है :-

(१) माया करे (२) गूढ माया करे (३) खोटा नाप-तोल करे (४) झूठ बोले।

★ मनुष्य आयु चार प्रकार से बंधता है :-

(१) स्वभाव से सरल (२) स्वभाव से विनीत

(३) दया भाव सहित (४) ईर्ष्या भाव रहित।

★ देव आयु चार प्रकार से बंधता है :-

(१) सरागसंयम (साधु व्रत) (२) संयमासंयम (श्रावक व्रत) (३) बालतप (अज्ञान तप) (४) अकाम निर्जरा (अनिच्छा से भूख आदि सहना)।

५. उदय (फल) द्वार :- आयुकर्म चार प्रकार से भोगा जाता है :-

(१) नरक के जीव नरक का आयु भोगे।

(२) तिर्यच के जीव तिर्यच का आयु भोगे।

(३) मनुष्य के जीव मनुष्य का आयु भोगे।

(४) देव के जीव देव का आयु भोगे।

६. स्थिति द्वार : नारकी और देवता की स्थिति जघन्य १० हजार वर्ष, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की।

मनुष्य और तिर्यच की स्थिति : जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ३ पल्योपम की।

छट्ठवां कर्म

१. नाम द्वार :- नाम कर्म।

२. लक्षण द्वार : जिस कर्म के उदय से जीव गति आदि विविध पर्यायो का अनुभव करे उसे 'नामकर्म' कहते है।

जैसे :- चित्रकार विविध प्रकार के चित्र बनाता है।

३. प्रकृति द्वार :- नामकर्म की ९३ प्रकृतियॉ है :-

(१) गति चार :- १. नरकगति २. तिर्यचगति ३. मनुष्यगति ४. देवगति।

(२) जाति पॉच :- १. एकेन्द्रिय २. बेइन्द्रिय ३. तेइन्द्रिय ४. चउरिन्द्रिय ५. पंचेन्द्रिय।

(३) शरीर पाँच :- १. औदारिक २. वैक्रिय ३. आहारक ४. तेजस ५. कार्मण।

(४) अंगोपांग तीन :- १. औदारिक २. वैक्रिय ३. आहारक।

(५) बंधन पाँच :- १. औदारिक २. वैक्रिय ३. आहारक ४. तेजस ५. कार्मण।

(६) संघात पाँच :- १. औदारिक २. वैक्रिय ३. आहारक ४. तेजस ५. कार्मण।

(७) संस्थान छह :- १. समचतुरस्त्र २. निग्रोध परिमण्डल ३. सादि ४. वामन ५. कुब्ज ६. हुण्डक।

(८) संहनन छह :- १. वज्रऋषभनाराच २. ऋषभनाराच ३. नाराच ४. अर्धनाराच ५. कीलिका ६. सेवार्त।

(९) वर्ण पाँच :- १. काला २. नीला ३. लाल, ४. पीला ५. सफेद।

(१०) गंध दो :- १. सुरभिगंध २. दुरभिगंध

(११) रस पाँच :- १. कड़वा २. कषैला ३. खट्टा ४. मीठा ५. तीखा।

(१२) स्पर्श आठ :- १. हल्का २. भारी ३. ठण्डा ४. गरम ५. लुखा ६. चिकना ७. खुरदरा ८. सुहाला।

(१३) आनुपुर्वी चार :- १. नरक आनुपुर्वी २. तिर्यच आनुपुर्वी ३. मनुष्य आनुपुर्वी ४. देव आनुपुर्वी।

(१४) प्रत्येक प्रकृति आठ :- १. अगुरूलघु २. उपघात ३. पराघात ४. उच्छ्वास ५. आतप ६. उद्योत ७. निर्माण ८. तीर्थकर।

(१५) विहायोगति दो :- १. शुभविहायोगति २. अशुभविहायोगति

(१६) त्रसदसक : १. त्रस २. बादर ३. पर्याप्त ४. प्रत्येक ५. स्थिर ६. शुभ ७. सुभग ८. सुस्वर ९. आदेय १०. यश:कीर्ति

(१७) स्थावरदसक :- १. स्थावर २. सूक्ष्म ३. अपर्याप्त ४. साधारण ५. अस्थिर ६. अशुभ ७. दुर्भग ८. दुस्वर ९. अनादेय १०. अपयशःकीर्ति।

४. बंध द्वार :- नामकर्म आठ प्रकार से बधता है।

★ शुभ नाम कर्म ४ प्रकार से बंधता है :-

१. मन की सरलता २. वचन की सरलता ३. काया की सरलता ४. विसंवाद रहितपना (तीनो योगो मे एकरूपता)

★ अशुभ नामकर्म ४ प्रकार से बंधता है :-

१. मन की वक्रता २. वचन की वक्रता ३. काया की वक्रता ४. विसंवाद सहितपना।

५. उदय (फल) द्वार :- नाम कर्म २८ प्रकार से भोगा जाता है।

★ शुभ नाम कर्म १४ प्रकार से भोगा जाता है :-

१. इष्ट शब्द २. इष्ट रूप ३. इष्ट गंध ४. इष्ट रस ५. इष्ट स्पर्श ६. इष्ट गति ७. इष्ट स्थिति ८. इष्ट लावण्य ९. इष्ट यशः कीर्ति १०. इष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम ११. इष्ट स्वर १२ कान्तस्वर १३. प्रियस्वर १४. मनोज्ञस्वर

★ अशुभ नाम कर्म १४ प्रकार से भोगा जाता है :-

१. अनिष्ट शब्द २. अनिष्ट रूप ३. अनिष्ट गंध ४. अनिष्ट रस ५ अनिष्ट स्पर्श ६. अनिष्ट गति ७. अनिष्ट स्थिति ८. अनिष्ट लावण्र्य ९. अनिष्ट यशःकीर्ति १०. अनिष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम ११ अनिष्ट स्वर १२. अकान्त स्वर १३. अप्रिय स्वर १४. अमनोज्ञ स्वर।

स्थिति द्वार :- जघन्य आठ मुहूर्त, उत्कृष्ट बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट दो हजार वर्ष का।

सातवां कर्म

१. नामद्वार :- गोत्र कर्म।

२. लक्षण द्वार :- जिस कर्म के उदय से जीव उच्च, नीच कुलो मे उत्पन्न हो उसे गोत्र कर्म कहते है।

जैसे : कुम्हार छोटे-बडे बर्तन बनाता है।

३. प्रकृति द्वार :- गोत्र कर्म की दो प्रकृतियाँ है :-

१. उच्च गोत्र २. नीच गोत्र

४. बंध द्वार :- गोत्र कर्म १६ प्रकार से बंधता है।

★ उच्च गोत्र कर्म आठ प्रकार से बंधता है :-

१. जाति (मातृ पक्ष का) २. कुल (पितृ पक्ष का) ३. बल ४. रूप ५. तप ६. श्रुत ७. लाभ ८. एश्वर्य का मद (अभिमान) नही करने से।

★ नीच गोत्र आठ प्रकार से बंधता है :-

१. जाति २. कुल ३. बल ४. रूप ५. तप ६. श्रुत ७. लाभ ८ ऐश्वर्य का मद (अभिमान) करने से।

५. उदय (फल) द्वार :- गोत्र कर्म १६ प्रकार से भोगा जाता है।

★ उच्च गोत्र आठ प्रकार से भोगा जाता है :-

१. जातिविशिष्ट २. कुलविशिष्ट ३. वलविशिष्ट ४. रूपविशिष्ट ५. तपविशिष्ट ६. श्रुतविशिष्ट ७. लाभविशिष्ट ८. ऐश्वर्यविशिष्ट।

★ नीच गोत्र आठ प्रकार से भोगा जाता है :-

१. जातिहीन २. कुलहीन ३. बलहीन ४. रूपहीन ५. तपहीन ६. श्रुतहीन ७. लाभहीन ८. ऐश्वर्यहीन।

६. स्थिति द्वार :- जघन्य आठ मुहूर्त, उत्कृष्ट २० कोडाकोड़ी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट दो हजार वर्ष का।

आठवां कर्म

१. नाम द्वार :- अन्तराय कर्म

२. लक्षण द्वार :- जिस कर्म के उदय से जीव को दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य मे विघ्न उत्पन्न हो उसे 'अन्तराय कर्म' कहते है।

जैसे :- राजा की आज्ञा होने पर भी भंडारी दान प्राप्ति मे बाधक होता है।

३. प्रकृति द्वार :- अन्तराय कर्म की पॉच प्रकृतियॉ है।

१. दानान्तराय २. लाभान्तराय ३. भोगान्तराय ४. उपभोगान्तराय ५. वीर्यान्तराय।

४. बंध द्वार :- अन्तराय कर्म पॉच प्रकार से बंधता है :-

१. दान देने मे अन्तराय देने से।

२. लाभ मे अन्तराय देने से।

३. भोग मे अन्तराय देने से।

४. उपभोग मे अन्तराय देने से।

५. वीर्य-धार्मिक क्रिया मे अन्तराय देने से।

५. उदय (फल) द्वार :- अन्तराय कर्म ५ प्रकार से भोगा जाता है:-

१. दान नही दे पाता।

२. लाभ प्राप्त नही होता।

३. आहार-पानी को भोग नही सकता।

४. वस्त्र, आभूषण आदि का उपभोग नही कर सकता।

५. तप-त्याग कर नही सकता।

६. स्थिति द्वार :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीस कोड़ाकोडी सागरोपम। अबाधाकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन हजार वर्ष का।

इस प्रकार कर्म के स्वरुप को जानकर जो कर्म बंध के कारणो को रोकेगे एवं बंधे हुए कर्मो को समभाव से भोगकर या तप आदि से क्षय करेगे वे अवश्य एक दिन मोक्ष के अनंता-शाश्वता सुख को प्राप्त करेगे।

सेवं भंते - सेवं भंते

नव तत्त्व

विवेकी सम्यक्दृष्टि जीवों को नव तत्त्व जानना आवश्यक है।

नव तत्त्वो के नाम :- १. जीव तत्त्व २. अजीव तत्त्व ३. पुण्य तत्त्व ४. पाप तत्त्व ५. आश्रव तत्त्व ६. संवर तत्त्व ७. निर्जरा तत्त्व ८. बंध तत्त्व और ९. मोक्ष तत्त्व।

१. जीव तत्त्व

जीव तत्त्व का लक्षण :- जो चैतन्य लक्षण, सदा उपयोगी, असंख्यात प्रदेशी, सुख-दुःख का बोधक, सुख-दुख का वेदक एवं अरूपी हो, उसे जीव तत्त्व कहते है।

१. जीव का एक भेद - चैतन्य लक्षण।

२. जीव के दो भेद - त्रस और स्थावर अथवा सिद्ध और संसारी।

३. जीव के तीन भेद - स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी अथवा भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया, नोभवसिद्धिया नो अभवसिद्धिया।

४. जीव के चार भेद - नारकी, तिर्यच, मनुष्य, देव अथवा चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, अवधिदर्शनी, केवलदर्शनी।

५. जीव के पांच भेद :- एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अथवा सयोगी, मनयोगी, वचनयोगी, काययोगी, अयोगी।

६. जीव के छः भेद :- पृथ्वीकायी, अप्कायी, तेउकायी, वायुकायी, वनस्पतिकायी, त्रसकायी अथवा सकषायी, क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी, लोभकषायी, अकषायी।

७. जीव के सात भेद :- नारकी, तिर्यच, तिर्यचणी, मनुष्य, मनुष्यणी, देव, देवांगना।

८. जीव के आठ भेद :- सलेशी, कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी, तेजोलेशी, पद्मलेशी, शुक्ललेशी, अलेशी।

९. जीव के नव भेद :- पृथ्वीकायी, अप्कायी, तेउकायी, वायुकायी, वनस्पतिकायी, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय।

१०. जीव के दस भेद :- एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय इन पांचो के अपर्याप्ता और पर्याप्ता।

११. जीव के ग्यारह भेद :- एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, नारकी, तिर्यच, मनुष्य, भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक।

१२. जीव के बारह भेद :- पृथ्वीकायी, अप्कायी, तेउकायी, वायुकायी, वनस्पतीकायी, त्रसकायी इन छह काय के अपर्याप्त और पर्याप्ता।

१३. जीव के तेरह भेद :- कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी, तेजोलेशी, पद्मलेशी, शुक्ललेशी इन छह के अपर्याप्ता और पर्याप्ता यह बारह तथा एक अलेशी।

१४. जीव के चौदह भेद :- सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता, पर्याप्ता
बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता, पर्याप्ता
बेइन्द्रिय का अपर्याप्ता, पर्याप्ता
तेइन्द्रिय का अपर्याप्ता, पर्याप्ता
चउरिन्द्रिय का अपर्याप्ता, पर्याप्ता
असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्ता, पर्याप्ता
संज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्ता, पर्याप्ता

विस्तार नय से जीव के ५६३ भेद .-

नारकी के १४ भेद, तिर्यच के ४८ भेद, मनुष्य के ३०३ भेद, देवता के १९८ भेद।

जीव तत्त्व को जानना और इन सब भेदो मे अपना जीव कुछ भेद छोडकर अनंतबार जन्म मरण कर चुका। अतः पुनः इन भेदो मे जाना नही पडे ऐसा प्रयत्न करे। जो जीव इनकी दया पालेगा वह इसभव मे, परभव मे परम सुख को प्राप्त करेगा।

२. अजीवतत्त्व

अजीव तत्त्व का लक्षण :- जो जड़ लक्षण, चैतन्य रहित, वर्णादि सहित तथा ज्ञान रहित, सुख-दुःख का अवेदक हो उसे अजीव तत्त्व कहते है।

अजीव के १४ भेद :-

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के तीन-तीन भेद स्कन्ध, देश, प्रदेश। काल का एक भेद - कालद्रव्य। पुद्गलास्तिकाय के चार भेद - स्कंध, देश, प्रदेश, परमाणु पुद्गल।

विस्तार नय से अजीव के ५६० भेद :-

अजीव दो प्रकार के - रूपी अजीव और अरूपी अजीव।

अरूपी अजीव के ३० भेद :- (१) धर्मास्तिकाय - द्रव्य से एक, क्षेत्र से लोक प्रमाण, काल से आदि अन्त रहित, भाव से अरूपी, गुण से चलन गुण।

(२) अधर्मास्तिकाय - द्रव्य से एक, क्षेत्र से लोक प्रमाण, काल से आदि अन्त रहित, भाव से अरुपी, गुण से स्थिर गुण।

(३) आकाशास्तिकाय - द्रव्य से एक, क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण, काल से आदि अन्त रहित, भाव से अरूपी, गुण से अवगाहना गुण।

(४) काल - द्रव्य से अनंत, क्षेत्र से ढ़ाईद्वीप प्रमाण, काल से आदि अन्त रहित, भाव से अरूपी, गुण से वर्तना गुण। ये २० भेद और १० भेद ऊपर के कहे हुए इस प्रकार २० + १० = ३० भेद अरूपी अजीव के हुए।

रुपी अजीव के ५३० भेद :-

१. वर्ण के ५ भेद :- काला, नीला, लाल, पीला, सफेद इन वर्णो मे प्रत्येक मे २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श और ५ संस्थान ये

२० बोल पाये जाते है। इस प्रकार ५ x २० = १०० बोल वर्ण की अपेक्षा हुए।

२. गंध के दो भेद :- सुरभिगंध, दुरभिगंध इन दोनो मे प्रत्येक मे ५ वर्ण, ५ रस, ८ स्पर्श और ५ संस्थान के ये २३ x २ = ४६ गंध की अपेक्षा हुए।

३. रस के पांच भेद :- कड़वा, कसेला, खट्टा, मीठा, तीखा इन पांचो रसो मे प्रत्येक मे ५ वर्ण, २ गंध, ८ स्पर्श और ५ संस्थान के इसप्रकार २० x ५ = १०० रस की अपेक्षा हुए।

४. स्पर्श के आठ भेद :- हल्का, भारी, ठण्डा, गरम, लूखा, चिकना, खुरदरा, कोमल इन आठो स्पर्श मे प्रत्येक मे ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ६ स्पर्श, ५ संस्थान ये २३ बोल पाये जाते है, इस प्रकार २३ x ८ = १८४ स्पर्श की अपेक्षा हुए।

५. संस्थान के पांच भेद :- १. परिमण्डल - रोटी या लड्डु के आकार, आकृति गोल है साथ ही ठोस है। २. वृत्त - चुडी या गेद के आकार आकृति गोल है साथ ही पोल है। ३. त्रिकोण - सिघोडे के समान ४. चौरस - चौकी के समान ५. आयत - लम्बी सुई या लकड़ी के समान इन पांचो मे प्रत्येक मे ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श इस प्रकार २० x ५ = १०० संस्थान की अपेक्षा हुए। इस प्रकार रूपी के ५३० औंर अरूपी अजीव के ३० बोल ५३० + ३० = ५६० भेद अजीव के है।

इस प्रकार अजीव के स्वरूप को जानना ये सब नाशवान है, अस्थिर है, पर्याये पलटती है। ऐसा समझकर जो जीव इन पर से मोह उतारेगा, राग, द्वेष नही करेगा वह इसभव मे, परभव मे परम सुख को प्राप्त करेगा।

३. पुण्य तत्त्व

पुण्य तत्त्व का लक्षण :- जो शुभ करणी से, शुभ कर्म के उदय से, शुभ उज्जवल पुद्गल का बंध पडे व जिसके फल भोगते समय आत्मा को मीठे लगे उसे पुण्य तत्त्व कहते है।

पुण्य ९ प्रकार से बंधता है :- १. अन्नपुण्य २. पाणपुण्य ३ लयनपुण्य (मकान आदि) ४. शयनपुण्य (पाट-पलंग आदि) ५. वस्त्रपुण्य ६. मनपुण्य ७. वचनपुण्य ८. कायापुण्य ९. नमस्कारपुण्य।

ये नव प्रकार से जो पुण्य उपार्जन करता है वह ४२ प्रकार से शुभ फल भोगता है।

१. सातावेदनीय २. उच्चगोत्र ३. तिर्यचायु ४. मनुष्यायु ५. देवायु ६. मनुष्यगति ७. मनुष्यानुपूर्वी ८. देवगति ९. देवानुपूर्वी १० पंचेन्द्रिय जाति ११-१५ पांच शरीर (औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तेजस, कार्मण)

१६-१८ तीन अंगोपांग (औदारिक, वैक्रिय, आहारक) १९ वज्रऋषभनाराच संहनन २०. समचतुरस्त्र संस्थान २१. शुभवर्ण २२. शुभगंध २३. शुभरस २४. शुभस्पर्श २५ उच्छ्वास २६. अगुरुलघु २७. पराघात (पराजित न होना) २८. आतप २९ उद्योत ३० निर्माण ३१. तीर्थकर ३२. शुभविहायोगति (राजहंस जैसी चाल हो) ३३ त्रस ३४. बादर ३५. पर्याप्त ३६. प्रत्येक ३७. स्थिर ३८. शुभ ३९. सुभग ४०. सुस्वर ४१. आदेय (जिसके वचन सर्व मान्य होवे) ४२. यश कीर्ति

जो जीव शुभपुण्य उपार्जन करके धर्मआराधना मे जुडेगा वह इसभव मे, परभव मे परम सुख को प्राप्त करेगा।

४. पाप तत्त्व

पापतत्त्व का लक्षण :- जो अशुभकरणी से, अशुभ कर्म के उदय से, अशुभ (मेले) पुद्गल का बंध पडे व जिसके फल भोगते समय आत्मा को कड़वे लगे उसे पाप तत्त्व कहते है।

पाप १८ प्रकार से बंधता है :- प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशून्य, परपरिवाद, रतिअरति, मायामृषावाद, मिथ्यादर्शनशल्य

ये १८ प्रकार से जो पाप उपार्जन करता है वह ८२ प्रकार से अशुभ फल भोगता है :-

१. मतिज्ञानावरणीय २ श्रुतज्ञानावरणीय ३. अवधिज्ञानावरणीय ४. मन.पर्यवज्ञानावरणीय ५. केवलज्ञानावरणीय ६. निद्रा ७. निद्रा-निद्रा ८. प्रचला ९ प्रचला-प्रचला १०. स्त्यानगृद्धि (थीणद्धि) ११. चक्षुदर्शनावरणीय १२. अचक्षुदर्शनावरणीय १३. अवधिदर्शनावरणीय १४. केवलदर्शनावरणीय १५. असातावेदनीय १६. मिथ्यात्व मोहनीय १७. अनंतानुबंधी क्रोध १८. मान १९. माया २०. लोभ २१. अप्रत्याख्यानी क्रोध २२. मान २३. माया २४. लोभ २५. प्रत्यारव्यानावरणीय क्रोध २६. मान २७. माया २८. लोभ २९. संज्वलन क्रोध ३०. मान ३१. माया ३२. लोभ ३३. हास्य ३४. रति ३५. अरति ३६. भय ३७. शोक ३८. दुगुंछा (घृणा) ३९. स्त्रीवेद ४०. पुरुषवेद ४१. नपुंसकवेद ४२. नरकायुष्य ४३. नरकगति ४४. नरकानुपूर्वी ४५. तिर्यचगति ४६. तिर्यचानुपूर्वी ४७. एकेन्द्रिय ४८. बेइन्द्रिय ४९. तेइन्द्रिय ५० चउरिन्द्रिय ५१. ऋषभनाराच संहनन ५२. नाराच संहनन ५३ अर्धनाराच संहनन ५४. कीलिका संहनन ५५. सेवार्त संहनन ५६. निग्रोधपरिमण्डल संस्थान ५७. सादिक संस्थान ५८. वामन संस्थान ५९. कुब्ज संस्थान ६० हुण्डक संस्थान ६१. अशुभ वर्ण ६२. अशुभ गंध ६३. अशुभ रस ६४. अशुभ स्पर्श ६५. अशुभ विहायोगति ६६. उपघातनाम ६७ स्थावर ६८. सूक्ष्म ६९. अपर्याप्त ७०. साधारण ७१. अस्थिर ७२. अशुभ ७३. दुर्भाग्य ७४. दुस्वर ७५. अनादेय ७६. अपयशः कीर्ति ७७. नीचगोत्र ७८. दानान्तराय ७९. लाभान्तराय ८०. भोगान्तराय ८१. उपभोगान्तराय ८२. वीर्यान्तराय।

जो पाप बंधने के कारण और पाप के कटु फल को जानकर पाप प्रवृत्ति को छोड़ेगे वे इसभव मे, परभव मे परम सुख प्राप्त करेगे।

५. आश्रव तत्त्व

आश्रव तत्त्व के लक्षण :- जीव रूपी तालाब के अंदर अव्रत या अप्रत्याख्यान द्वारा, विषय-कषाय का सेवन करने से, इन्द्रियादि नालो के द्वारा जो कर्म रूपी जल का प्रवाह आता है, उसे आश्रव तत्त्व कहते है।

आश्रव के जघन्य २० भेद और उत्कृष्ट ४२ भेद है।

जघन्य २० भेद :- १. मिथ्यात्व आश्रव २. अव्रत आश्रव ३. प्रमाद आश्रव ४. कषाय आश्रव ५. अशुभयोग आश्रव ६. हिसा करे तो आश्रव ७. झूठ बोले तो आश्रव ८. चोरी करे तो आश्रव ९. मैथुन सेवन करे तो आश्रव १०. परिग्रह रखे तो आश्रव ११. श्रोतेन्द्रिय वश मे नही रखे तो आश्रव १२. चक्षुइन्द्रिय वश मे नही रखे तो आश्रव १३. घ्राणेन्द्रिय वश मे नही रखे तो आश्रव १४. रसनेन्द्रिय वश मे नही रखे तो आश्रव १५. स्पर्शनेन्द्रिय को वश मे नही रखे तो आश्रव १६. मन वश मे नही रखे तो आश्रव १७. वचन वश मे नही रखे तो आश्रव १८. काया वश मे नही रखे तो आश्रव १९. भण्ड उपकरण अयतना से लेवे और रखे तो आश्रव २०. सुई कुशाग्र मात्र अयतना से लेवे और रखे तो आश्रव।

उत्कृष्ट ४२ भेद :- पांच आश्रव - प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह।

पांच इन्द्रियो का विषय - शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श के प्रति राग-द्वेष।

चार कषाय - क्रोध, मान, माया, लोभ के वश प्रवृत्ति करना।

तीन अशुभ योग - मन, वचन, काया की अशुभ प्रवृत्ति।

और २५ क्रिया। इस प्रकार ५ + ५ + ४ + ३ + २५ = ४२ भेद आश्रव के है।

जो जीव आश्रव तत्त्व को जानकर आते हुए कर्मो को रोकेगे, आश्रव को छोडेगे वे इसभव मे, परभव मे परम सुख प्राप्त करेगे।

६. संवर तत्त्व

संवर तत्त्व का लक्षण :- जीव रूपी तालाब के अंदर, इन्द्रियादि नालो के द्वारा आनेवाले कर्मरूपी जल के प्रवाह को व्रत या प्रत्याख्यानादि द्वारा जो रोकता है उसे संवर तत्त्व कहते है।

संवर के सामान्य २० भेद है और विस्तार से ५७ भेद है।

सामान्य २० भेद :- १. समकित संवर २. व्रत पच्चक्खाण करे तो संवर ३. प्रमाद नही करे तो संवर ४. कषाय नही करे तो संवर ५. शुभयोग संवर ६. हिसा नही करे तो संवर ७. झूठ नही बोले तो संवर ८. चोरी नही करे तो संवर ९. मैथुन नही सेवन करे तो संवर १०. परिग्रह नही रखे तो संवर ११-१५. पांचो इन्द्रियो को वश मे रखे तो संवर १६-१८. तीनो योगो को वश मे रखे तो संवर १९. भण्ड उपकरण यतना से लेवे और रखे तो संवर २०. सुई कुशाग्र मात्र भी यतना से लेवे और रखे तो संवर।

विस्तार से संवर के ५७ भेद :-

पांच समिति - तीन गुप्ति - १. ईर्या समिति २. भाषा समिति ३. एषणा समिति ४. आयाण भण्ड मत्त निक्खेवणा समिति ५. उच्चार, पासवण, खेल, जल्ल संघाण परिट्ठावणिया समिति ६. मन गुप्ति ७. वचन गुप्ति ८. काया गुप्ति।

२२. परीषह जय - ९. क्षुधा १०. पिपासा ११. शीत १२. उष्ण १३. डांस मच्छर १४. अचेल १५. अरति १६. स्त्री १७. चर्या १८. निसिहिया १९. शय्या २०. आक्रोश २१. वध २२. याचना

२३. अलाभ २४. रोग २५. तृणस्पर्श २६. मल २७. सत्कार पुरस्कार २८. प्रज्ञा २९. अज्ञान ३० दर्शन।

१०. यति धर्म :- ३१. क्षमा ३२. निर्लोभता ३३. सरलता ३४. कोमलता ३५. लघुता ३६. सत्य ३७. संयम ३८. तप ३९. त्याग ४० ब्रह्मचर्य।

१२. भावना - ४१. अनित्य भावना :- संसार के सब पदार्थ अनित्य है। यह भावना भरत चक्रवर्ती ने भाई थी।

४२. अशरण भावना :- कोई किसी को शरण देनेवाला नही है। यह भावना अनाथीमुनि ने भाई थी।

४३. संसार भावना - जीव कर्म करके संसार मे भटकता रहता है, नई-नई अवस्थाओ को धारण करता है। यह भावना धन्ना शालिभद्र ने भाई थी।

४४. एकत्त्व भावना :- जीव परलोक से अकेला आया और अकेला ही जायेगा। यह भावना नमिराजऋषि ने भाई थी।

४५. अन्यत्व भावना :- इस जीव से शरीर, कुटुम्ब, धन-धान्य आदि सभी परिग्रह अन्य है; ये मेरे नहीं है, मै भी उनका नही हूं। यह भावना मृगापुत्र ने भाई थी।

४६. अशुचि भावना :- इस शरीर से मल-मूत्र आदि सदैव निकलते रहते है; स्नान आदि से शुद्ध नही होता। यह भावना सनत्कुमार चक्रवर्ती ने भाई थी।

४७. आश्रव भावना :- संसारी जीव पांच आश्रव द्वारा नए-नए कर्म बांध रहे है। यह भावना समुद्रपाल ने भाई थी।

४८. संवर भावना :- व्रत-संवर आदि से जीव नये कर्म नही बांधता है और कुछ पुराने कर्मो को पतले करता है। यह भावना गौतम स्वामी ने भाई थी।

४९. निर्जरा भावना :- तप द्वारा निबिड़ कर्म भी टूट जाते है। अनेक लब्धियां भी प्राप्त होती है। यह भावना अर्जुनमुनि ने भाई थी।

५० लोक भावना :- १४ रज्जु लोक मे तिलमात्र भी ऐसी जगह नही है, जहां यह जीव जन्मा-मरा न हो, अब कब तक भटकता रहूँगा? यह भावना शिवराज ऋषि ने भाई थी।

५१. बोधि दुर्लभ भावना :- राज्य, ऋद्धि, देव आदि सभी सुलभ है, अनत बार मिले है, किन्तु समकित का मिलना दुर्लभ है। यह भावना ऋषभदेव के ९८ पुत्रो ने भाई थी।

५२. धर्म भावना .- अहिसा, संयम, तप का आचरण ही शाश्वत सुख देनेवाला है। यह भावना धर्मरुचि अणगार ने भाई थी।

५. चारित्र :- ५३. सामायिक चारित्र ५४. छेदोपस्थापनिय चारित्र ५५. परिहारविशुद्ध चारित्र ५६. सूक्ष्मसम्पराय चारित्र ५७. यथाख्यात चारित्र

जो जीव संवर के स्वरूप को जानकर आदरेगा वह इसभव मे, परभव मे परम सुख को प्राप्त करेगा।

७. निर्जरा तत्त्व

निर्जरा तत्त्व का लक्षण :- जैसे जल से शरीर की, क्षार से वस्त्र की और अग्नि से स्वर्ण की शुद्धि होती है, वैसे बारह प्रकार की तपस्या द्वारा आत्मा की शुद्धि होती है। कर्मो का क्षय होता है, उसे निर्जरा तत्त्व कहते है।

निर्जरा तत्त्व के १२ भेद :- १. अनशन २. ऊनोदरी ३. भिक्षाचरी ४. रसपरित्याग ५ कायक्लेश ६. प्रतिसंलीनता ७. प्रायश्चित्त ८. विनय ९. वैयावच्च १०. स्वाध्याय ११. ध्यान १२. कायोत्सर्ग।

इस तरह १२ प्रकार के तप को जानकर जो इन्हे आदरेगा वह इस भव मे, परभव मे परम सुख को प्राप्त करेगा।

८. बंध तत्त्व

बंध तत्त्व का लक्षण :- क्षीर-नीर, धातु-मिट्टी, पुष्प-इत्र, तिल-तैल इत्यादि की तरह आत्मा के प्रदेश तथा कर्म के पुद्गलो का परस्पर मे मिलना, उसे बंध तत्त्व कहते है।

बंध के चार भेद :-

(१) प्रकृति बंध :- कर्म पुद्गलो का आठ प्रकार से भिन्न-भिन्न स्वभावपने बंधना।

(२) स्थितिबंध :- जीव के साथ कर्म पुद्गलों के रहने के समय का निर्धारितपने बंधना।

(३) अनुभाग बंध :- कर्म पुद्गलो का तीव्र-मंद आदि रस पने बंधना

(४) प्रदेश बंध :- कर्म पुद्गलो के दलो का आत्म प्रदेशो के साथ न्यूनाधिकपने बंधना।

इन चार प्रकार के बंध के स्वरूप को मोदक के दृष्टान्त से समझना :-

(१) प्रकृतिबंध :- जैसे कई प्रकार के द्रव्यो के संयोग से बने हुए मोदक की प्रकृति भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है; कोई वात, कोई पित्त आदि की घातक होती है, उसी प्रकार कर्म पुद्गलो का भिन्न-भिन्न प्रकार के गुणो के घातक (स्वभाव)पने बंधना।

(२) स्थितिबंध :- जैसे वह मोदक पक्ष, मास, दो मास तक रह सकता है। उसी प्रकार कर्म पुद्गलो का आत्मा के साथ रहने की काल मर्यादापने बंधना।

(३) अनुभागबंध :- जैसे वह मोदक कड़वा, तीखा आदि रस वाला होता है, उसी प्रकार कर्म पुद्गलो का तीव्र मन्द आदि रसपने बंधना।

(४) प्रदेशबंध :- जैसे वह मोदक ५०० ग्राम, २५० ग्राम आदि न्यूनाधिक परिमाण वाला होता है। उसी प्रकार कर्म पुद्‌गलो का न्यूनाधिकपने बधना।

जो जीव बंध तत्त्व को जान करके कर्मों के बंधन तोडेगा, वह इस भव मे, परभव मे परम सुख को प्राप्त करेगा।

९. मोक्ष तत्त्व

मोक्ष तत्त्व का लक्षण :- आत्मा के सकल प्रदेशो से सर्व कर्मों का सर्वथा छूट जाना, सर्वथा बंधन से मुक्त हो जाना, सकल कार्य की सिद्धि हो जाना तथा मोक्ष गति को प्राप्त हो जाना मोक्ष तत्त्व है।

मोक्ष प्राप्ति के चार साधन है - सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र, सम्यक् तप।

सिद्ध पन्द्रह तरह के होते है :-

१. तीर्थ सिद्धा २. अतीर्थसिद्धा ३ तीर्थकरसिद्धा ४. अतीर्थकरसिद्धा ५ स्वयबुद्धसिद्धा ६ प्रत्येकबुद्धसिद्धा ७. बुद्धबोधितसिद्धा ८. स्त्रीलिगसिद्धा ९ पुरुषलिगसिद्धा १०. नपुंसकलिगसिद्धा ११. स्वलिगसिद्धा १२. अन्यलिगसिद्धा १३. गृहस्थलिगसिद्धा १४. एकसिद्धा १५. अनेकसिद्धा

❊ मोक्ष के नव द्वार ❊

१. सद्‌पद प्ररुपणा द्वार :- मोक्ष गति है, पूर्व समय मे थी, आगामी काल मे रहेगी। उसका अस्तित्व है। आकाश कुसुमवत् उसकी नास्ति नही है।

२. द्रव्य परिमाण द्वार :- सिद्ध अनंत है, अभव्य जीव से अनंत गुण अधिक है, एक वनस्पतिकाय के जीवो को छोडकर दूसरे २३ दण्डक के जीवो से सिद्ध अनत गुण है।

३. क्षेत्र द्वार :- सिद्धशिला का विस्तार इस प्रकार है :- सिद्धशिला

४५ लाख योजन की लम्बी और चौडी है। मध्य मे आठ योजन की जाड़ी है। क्रमशः घटती किनारो के पास मे मक्खी के पंख से भी अधिक पतली है। शुद्ध सोने के समान, शंख, चन्द्र, बगुला, रत्न, चांदी का पाट, मोती का हार और क्षीरसागर से भी अधिक उज्जवल है। उसकी परिधि एक करोड़ बयालीस लाख तीस हजार दो सौ उनपचास योजन, एक गाउ एक हजार सातसौ छासठ धनुष और पौने छः अंगुल झाझेरी है। सिद्धो के रहने का स्थान सिद्धशिला के ऊपर के अन्तिम गाउ के छट्ठे भाग मे है।

४. स्पर्शना द्वार :- सिद्ध क्षेत्र से कुछ अधिक सिद्ध की स्पर्शना है।

५. काल द्वार :- एक सिद्ध की अपेक्षा (सिद्ध की) आदि है परन्तु अन्त नही है, सर्व सिद्ध की अपेक्षा आदि भी नही है और अन्त भी नही है।

६. भाग द्वार :- सब जीवो से सिद्ध के जीव अनंतवे भाग है। और सर्व लोक के असंख्यातवे भाग मे सिद्ध भगवान विराजमान है।

७. भाव द्वार :- सिद्धो मे क्षायिक भाव है - केवलज्ञान, केवलदर्शन। क्षायिक समकित और पारिणामिक भाव मे "सिद्धपना" है।

८. अन्तर द्वार :- सिद्धो को फिर लौटकर संसार मे नही आना पड़ता है जहाँ एक सिद्ध है वहां अनंत सिद्ध है और जहां अनंत सिद्ध है वहां एक सिद्ध है इसलिए सिद्धो मे अन्तर नही है।

९. अल्पबहुत्व द्वार :- सबसे कम नपुंसकलिग सिद्ध, उससे स्त्रीलिंग सिद्ध संख्यात गुण, उससे पुरुषलिग सिद्ध संख्यात गुण। एक समय मे नपुंसकलिग दस, स्त्रीलिग बीस, पुरुषलिग एक सौ आठ सिद्ध होते है।

ॐ मोक्ष में कौन जाते हैं? ॐ

१. भव्य सिद्धिक २ बादर ३. त्रस ४. संज्ञी ५. पर्याप्त ६. मनुष्यगतिवाले ७. वज्रऋषभनाराच सहननी ८. क्षायिक समकिती ९. अवेदी १० अप्रमादी ११. अकषायी १२ यथाख्यात चारित्री १३. स्नातक निर्ग्रन्थ १४. परम शुक्ललेशी १५. पंडितवीर्यवान १६. शुक्लध्यानी १७. केवलज्ञानी १८. केवलदर्शनी १९. चरमशरीरी इस तरह १९ बोल वाले मनुष्य मोक्ष मे जाते है।

जघन्य दो हाथ की, उत्कृष्ट ५०० धनुष की अवगाहना वाले मोक्ष मे जाते है। जघन्य नववर्ष की, उत्कृष्ट करोडपूर्व की आयुष्यवाले कर्मभूमि के जीव मोक्ष मे जाते है।

जब सब कर्मों से आत्मा मुक्त होती है, तब वह अरुपी भाव को प्राप्त होती है। कर्मों से अलग होते ही एक समय मे लोक के अग्र भाग पर आत्मा पहुँचकर अलोक को स्पर्श कर रह जाती है। अलोक मे नही जाती है, क्योकि वहाँ धर्मास्तिकाय नही है। इसलिए लोकाग्र पर स्थिर हो जाती है। प्रथम समय मे वह पहुँच जाती है। दूसरे समय मे अचल गति को प्राप्त कर लेती है। वहां से न तो चवकर कोई आती है और न हलन चलन की क्रिया होती है। अजर अमर अविनाशी पद को प्राप्त हो जाती है और सदाकाल आत्मा अनंत सुख की लहरो मे निमग्न रहती है।

"ऐसे सिद्ध भगवन्तो को त्रिकाल वन्दन"।

सेव भंते - सेवं भंते

केशी-गौतम चर्चा

उत्त. सू. के २३ वें अ. में

प्रश्न	उत्तर
१. शत्रु क्या है?	नही जीती हुई आत्मा।
२. मित्र क्या है?	जीती हुई आत्मा।
३. बंधन क्या है?	राग-द्वेष, स्नेह।
४. मुक्ति क्या है?	वीतरागता।
५. विषलता क्या है?	भवतृष्णा।
६. अमृत क्या है?	भवमुक्ति।
७. अग्नि क्या है?	क्रोधादि ४ कषाय।
८. जल क्या है?	ज्ञानादि ४ धर्म।
९. दुष्ट अश्व क्या है?	बे लगाम घोड़ा।
१० जातिवंत अश्व क्या है?	लगामवाला घोडा।
११. लगाम क्या है?	देव, गुरु, शास्त्र आज्ञा।
१२. कुमार्ग क्या है?	हिसामय धर्म।
१३. सुमार्ग क्या है?	अहिसामय धर्म।
१४. सागर क्या है?	जन्म-मरण आदि।
१५. द्वीप क्या है?	चार शरण।
१६. नाव क्या है?	काया।
१७. तिरानेवाली नाव क्या है?	संवरवाली काया।
१८. डुबानेवाली नाव क्या है?	आश्रववाली काया।
१९. नाविक कौन है?	जीव।
२०. अंधकार क्या है?	अज्ञान।
२१. प्रकाश क्या है?	ज्ञान।

२२. सूर्य क्या है? — तीर्थंकर।
२३ दुख के भेद कितने है? — शारीरिक, मानसिक।
२४. दु खरहित स्थान कौनसा है? — मोक्ष।
२५ मोक्ष कहाँ है? — लोकाग्र पर।
२६. प्राज्ञ कौन है? — जो धर्म को जाने।
२७. जड कौन है? — जो धर्म को न जाने।
२८. सरल कौन है? — जो धर्म को शुद्ध पाले।
२९. वक्र कौन है? — जो धर्म मे टेढ़ा चले।
३०. यम क्या है? — महाव्रत।
३१. पाच महाव्रत किनमे है? — पहले व अंतिम शासन मे।
३२ चार महाव्रत किनमे है? — मध्य के २२ के शासन मे।
३३. उत्कृष्ट शासन किनका? — मध्य के २२ तीर्थकरो का।
३४. मध्यम शासन किनका? — प्रथम तीर्थंकर का।
३५ जघन्य शासन किनका? — चरम तीर्थंकर (महावीर स्वामी) का।
३६ ज्येष्ठ कुल किनका? — भगवान पार्श्वनाथ का।
३७. कनिष्ठ कुल किनका? — भगवान महावीर का।
३८. साध्य क्या है? — मोक्ष।
३९. निश्चय साधन क्या है? — ज्ञान, दर्शन, चारित्र।
४० व्यवहार साधन क्या है? — मुंहपत्ती, रजोहरण।
४१. केशी कितने हुए? — परदेशी को बोध देनेवाले और गौतम से चर्चा करनेवाले।
४२. गौतम महावीर के साथ रहे या बिछुडे? — बहुत साथ रहे, केशी से चर्चा की तब और देवश्रमण को बोध देने गये तब बिछुडे।

४३. देव समवसरण मे ही आते है?	नही, केशी-गौतम की चर्चा जैसे प्रसंग मे भी आते है।
४४. देवदृश्य है या अदृश्य है?	दोनो है, जैसे इस चर्चा मे थे।

दस श्रावकों का परिचय

उपासकदसांगसूत्र में

नाम	पत्नि	नगरी	धन	गायें
१. आनंदश्रावक	शिवानंदा	वाणिज्य	१२ करोड़	४० हजार
२. कामदेव	भद्रा	चंपा	१८ करोड	६० हजार
३. चुलनीपिया	श्यामा	बनारस	२४ करोड	८० हजार
४. सुरादेव	धन्या	बनारस	१८ करोड़	६० हजार
५. चुल्लशतक	बहुला	आलंभिका	१८ करोड	६० हजार
६. कुण्डकौलिक	पुष्या	कंपिलपुर	१८ करोड़	६० हजार
७. शकडालपुत्र	अग्निमित्रा	पोलसपुर	३ करोड	१० हजार
८. महाशतक	रेवती	राजगृही	२४ करोड	८० हजार
९. नंदिनीपिया	अश्विनी	श्रावस्ती	१२ करोड	४० हजार
१०. शालिहीपिया	फाल्गुनी	श्रावस्ती	१२ करोड	४० हजार

"उपसर्ग" (विजय-पतन के विषय में जानकारी)

१. आनंदश्रावक :- अवधिज्ञान, गौतम के साथ चर्चा, दृढता, विनयशीलता।

२. कामदेव :- पिशाच, हाथी, सर्प के रूप मे देव के द्वारा दिये गये उपसर्ग सहन किये। भगवान ने उनकी प्रशंसा की। संघ को उनका आदर्श मानकर प्रेरणा लेने को कहा।

३. चुलनीपिया :- तीनो पुत्रो के तीन-तीन टुकड़े करके, कढ़ाई मे तलकर, रक्त और मांस को शरीर पर छिटने पर भी धर्म मे दृढ रहे। परन्तु भद्रा माता की ममता से पौषध से उठ गये।

४. सुरादेव श्रावक .- तीनो पुत्रो के पाच-पाच टुकडे करके पहले के समान दु:ख देने पर भी धर्म मे दृढ़ रहे। परन्तु शरीर मे सोलह महारोग उत्पन्न करने की धमकी से पौषध से उठ गये।

५. चुल्लशतक :- तीनो पुत्रो के सात-सात टुकड़े करके, पहले के समान दु:ख देने पर भी धर्म मे दृढ रहे। परन्तु अपने समस्त धन को घर से निकालकर नगर के रास्तो पर बिखेरने की धमकी से उठ गये।

६. शकडाल पुत्र :- देव के संकेत से भ. महावीर के दर्शन करने गये और उन्हे अपने यहॉ लाये। भ. महावीर ने घडो के दृष्टान्त से बोध दिया। कुभकार शकडाल भ. महावीर के श्रावक हो गये। गौशालक ने पुन: आकर अपना अनुयायी बनाने के लिए खूब कपट किया। परन्तु सब निष्फल गया और अन्त मे देव ने परीक्षा की। तीनो पुत्रो के नव-नव टुकडे करने पर भी धर्म मे दृढ़ रहे। परन्तु पत्नी के मोह से पौषध से उठ गये।

८. महाशतक :- स्वयं की पत्नी द्वारा उपसर्ग देने पर क्रोध मे कटुवचन बोल गये।

९. नंदिनीपिया .- उपसर्ग नही आया।

१०. शालिहीपिया :- उपसर्ग नही आया।

दसो श्रावको की श्रावक पर्याय बीस-बीस वर्ष की है। उन्होने साढे चौदह वर्ष तक श्रावक के व्रत पाले और साढे पांच वर्ष तक ग्यारह प्रतिमाओ का पालन किया। एक महिने का संथारा करके कालधर्म को प्राप्त हुए। दसो श्रावक पहले देवलोक मे गये है, वहॉ से चवकर महाविदेह क्षेत्र मे जन्म लेकर संयम, तप की आराधना करके मोक्ष मे जायेगे।

सेवं भंते - सेव भते

समकित के ११ द्वार

१. नाम द्वार :- १. क्षायिक समकित २. उपशम समकित ३. वेदक समकित ४ क्षयोपशम समकित।

२. लक्षण द्वार :- (१) ७ प्रकृति (अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ और समकित मोहनीय, मिथ्यात्व मोहनीय, मिश्र मोहनीय) का मूल से क्षय करे उसे क्षायिक समकित कहते है।

(२) सातो प्रकृतियो को उपशमावे उसे उपशम समकित कहते है।

(३) छ प्रकृति को उपशमावे और समकित मोहनीय को वेदे उसे वेदक समकित कहते है।

(४) चार प्रकृति का क्षय करे और दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृति को उपशमावे उसे क्षयोपशम समकित कहते है।

३. आवण द्वार :- क्षायिक समकित केवल मनुष्य भव मे आवे। शेष तीन समकित चारो गति मे आवे।

४. पावण द्वार :- चारो ही समकित चारो गति मे पावे।

५. परिमाण द्वार :- क्षायिक समकित वाले अनंत जीव (सिद्ध की अपेक्षा)। शेष तीन समकित वाले असंख्यात जीव।

६. उच्छेद द्वार :- क्षायिक समकित का उच्छेद कभी नही होवे। शेष तीन की भजना।

७. स्थिति द्वार :- क्षायिक समकित की स्थिति सादि अनंत। उपशम समकित की स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की। क्षयोपशम और वेदक समकित की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ६६ सागरोपम झाझेरी।

८. अन्तर द्वार :- क्षायिक समकित मे अन्तर नही पडे। शेष तीन

समकित मे अन्तर पडे तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त का और उत्कृष्ट अनंतकाल का यावत् देशन्यून अर्धपुद्गल परार्वतन काल।

९. निरन्तर द्वार :- क्षायिक समकित निरन्तर आठ समय तक आवे। शेष तीन समकित आवलिका के असंख्यातवे भाग जितने समय निरन्तर आवे।

१०. आगरेश द्वार :- क्षायिक समकित एक बार ही आवे। उपशम समकित एक भव मे जघन्य एक बार, उत्कृष्ट दो बार आवे। अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट पांच बार आवे। शेष दो समकित एक भव की अपेक्षा जघन्य एक बार, उत्कृष्ट असंख्यात बार आवे। अनेक भव की अपेक्षा जघन्य दो बार, उत्कृष्ट असंख्यात बार आवे।

११. क्षेत्र स्पर्शना द्वार :- क्षायिक समकितवाला सम्पूर्ण लोक स्पर्शे (केवली समुद्घात की अपेक्षा)। शेष तीन समकित वाले देशन्यून सात राजू लोक स्पर्शे।

१२. अल्पबहुत्व द्वार :- सबसे कम उपशम समकित वाले। उनसे वेदक समकित वाले असंख्यात गुणा, उनसे क्षयोपशम समकित वाले असंख्यात गुणा, उनसे क्षायिक समकित वाले अनंतगुणा (सिद्ध भ. की अपेक्षा)।

सेव भते -सेवं भते

सिद्धद्वार

पन्नवणा सूत्र के २० वें पद में .....

◆ कहाँ से "एक समय मे" कितने सिद्ध होते है?

	जघन्य	उत्कृष्ट
(१) पहली नरक से निकले हुए	१	१०
(२) दूसरी नरक से निकले हुए	१	१०
(३) तीसरी नरक से निकले हुए	१	१०
(४) चौथी नरक से निकले हुए	१	४
(५) भवनपति देवो से निकले हुए	१	१०
(६) भवनपति देवियो से निकले हुए	१	५
(७) पृथ्वीकाय से निकले हुए	१	४
(८) अप्काय से निकले हुए	१	४
(९) वनस्पतिकाय से निकले हुए	१	६
(१०) गर्भज तिर्यच से निकले हुए	१	१०
(११) तिर्यचणी से निकले हुए	१	१०
(१२) गर्भज मनुष्य से निकले हुए	१	१०
(१३) मनुष्याणी से निकले हुए	१	२०
(१४) वाणव्यन्तर देवो से निकले हुए	१	१०
(१५) वाणव्यन्तर देवियो से निकले हुए	१	५
(१६) ज्योतिषी देवो से निकले हुए	१	१०
(१७) ज्योतिषी देवियो से निकले हुए	१	२०
(१८) वैमानिक देवो से निकले हुए	१	१०८
(१९) वैमानिक देवियो से निकले हुए	१	२०
(२०) स्वलिगी	१	१०८

(२१) अन्य लिगी	१	१०
(२२) गृहस्थलिगी	१	४
(२३) स्त्रीलिगी	१	२०
(२४) पुरुषलिगी	१	१०८
(२५) नपुंसकलिगी	१	१०
(२६) उर्ध्वलोक मे	१	४
(२७) अधोलोक मे	१	२०
(२८) तिर्च्छालोक मे	१	१०८
(२९) जघन्य अवगाहनावाले	१	४
(३०) मध्यम अवगाहनावाले	१	१०८
(३१) उत्कृष्ट अवगाहनावाले	१	२
(३२) समुद्र मे	१	२
(३३) नदी प्रमुख जल मे	१	३
(३४) तीर्थसिद्ध	१	१०८
(३५) अतीर्थसिद्ध	१	१०
(३६) तीर्थकर सिद्ध	२	४
(३७) अतीर्थकर सिद्ध	१	१०८
(३८) स्वयंबुद्ध सिद्ध	१	४
(३९) प्रत्येकबुद्ध सिद्ध	१	१०
(४०) बुद्धबोधित सिद्ध	१	१०८
(४१) एक सिद्ध	१	१
(४२) अनेक सिद्ध	२	१०८
(४३) विजय-विजय प्रति	१	२०
(४४) भद्रशालवन मे	१	४
(४५) नन्दनवन वन मे	१	४

(४६) सोमनस वन मे	१	४
(४७) पण्डग वन मे	१	२
(४८) अकर्मभूमि मे	१	१०
(४९) कर्मभूमि मे	१	१०८
(५०) पहले आरे मे	१	१०
(५१) दूसरे आरे मे	१	१०
(५२) तीसरे आरे मे	१	१०८
(५३) चौथे आरे मे	१	१०८
(५४) पॉचवे आरे मे	१	१०
(५५) छठे आरे मे	१	१०
(५६) अवसर्पिणी मे	१	१०८
(५७) उत्सर्पिणी मे	१	१०८
(५८) नोत्सर्पिणीनोवसर्पिणी मे	१	१०८

इन ५८ बोलो मे अन्तर सहित एक समय मे जघन्य और उत्कृष्ट जो सिद्ध होते है, वे कहे है। अब अन्तर रहित आठ समय तक यदि सिद्ध होवे तो कितने होते है? वह कहते है :-

	जघन्य	उत्कृष्ट
(१) पहले समय में	१	१०८
(२) दूसरे समय मे	१	१०२
(३) तीसरे समय मे	१	९६
(४) चौथे समय मे	१	८४
(५) पॉचवे समय मे	१	७२
(६) छठे समय मे	१	६०
(७) सातवे समय मे	१	४८
(८) आठवे समय मे	१	३२

आठ समय के बाद अन्तर पडे बिना सिद्ध नही होते।

संज्ञा पद

पन्नवणा सूत्र के ८ वें पद में और ठाणांग के १० वें ठाणें में

संज्ञा अर्थात् जीवो की इच्छा, संज्ञा १० प्रकार की होती है :-

१. आहार २. भय ३ मैथुन ४. परिग्रह ५. क्रोध ६. मान ७. माया ८. लोभ ९. लोक १० ओघ

★ द्रव्य से - बारबार, क्षेत्र से - प्रत्येक भव मे, काल से - अनादि काल से, भाव से - रुचि पूर्वक करते-करते जिसकी टेव पड़ चुकी है, गुण से - जिससे कर्म बंध होता है, शब्द से - उसे संज्ञा कहते है।

★ प्रत्येक संज्ञा के ४-४ कारण है :-

१. देह २. कर्म उदय ३. दर्शन ४. उपयोग।

★ **आहार संज्ञा** - चार कारण से उपजे - १ पेट खाली होने से, २ क्षुधा वेदनीय के उदय से, ३ आहार देखने से और ४ आहार का चितन करने से।

★ **भय संज्ञा** - चार कारण से उपजे - १ अधैर्य रखने से, २ भय मोहनीय के उदय से, ३ भय उत्पन्न करने वाले पदार्थो को देखने से, ४ भय का चितन करने से।

★ **मैथुन संज्ञा** - चार कारण से उपजे - १ शरीर पुष्ट बनाने से, २ वेद मोहनीय के उदय से, ३ स्त्री आदि को देखने से और ४ काम-भोग का चितन करने से।

★ **परिग्रह संज्ञा** - चार कारण से उपजे - १ ममत्व बढाने से, २ लोभ मोहनीय के उदय से, ३ धन-सम्पत्ति को देखने से और ४ धन-संपत्ति का चितन करने से।

★ **क्रोध, मान, माया, लोभ चारो संज्ञाएं** - चार कारण से उपजे- १ क्षेत्र (खुली जमीन, खेत-बाग आदि) के लिये, २ वत्थु (ढकी हुई जमीन, मकान-दुकान आदि) के लिये, ३ शरीर - उपधि के लिये, ४ धन-धान्य आदि के लिये।

★ **लोक संज्ञा** - अन्य लोगो को देख स्वयं वैसा ही कार्य करे (अपने पड़ोसी, परिचित इत्यादि का घर, भोजन, वाहन, वेश आदि को देखकर उसके अनुकरण की भावना होना। अपने हित-अहित को नही सोचना एक प्रकार का अंधवत् अनुकरण करना। विज्ञापनो से ललचाना)।

★ **ओघ संज्ञा** - १ शून्य चित्त से विलाप करना २ घास तोडना ३ जमीन कुरेदना ४ सिर खुजालना आदि (बिना देखे-सुने, बिना सोचे-समझे, काया की अमुक आदत)।

★ अल्पबहुत्व ★

(आहार, भय, मैथुन, परिग्रह)

(१) नरक -	मैथुन	आहार	परिग्रह	भय	संख्यात गुण २
(२) तिर्यच -	परिग्रह	मैथुन	भय	आहार	संख्यात गुण २
(३) मनुष्य -	भय	आहार	परिग्रह	मैथुन	संख्यात गुण २
(४) देव -	आहार	भय	मैथुन	परिग्रह	संख्यात गुण २

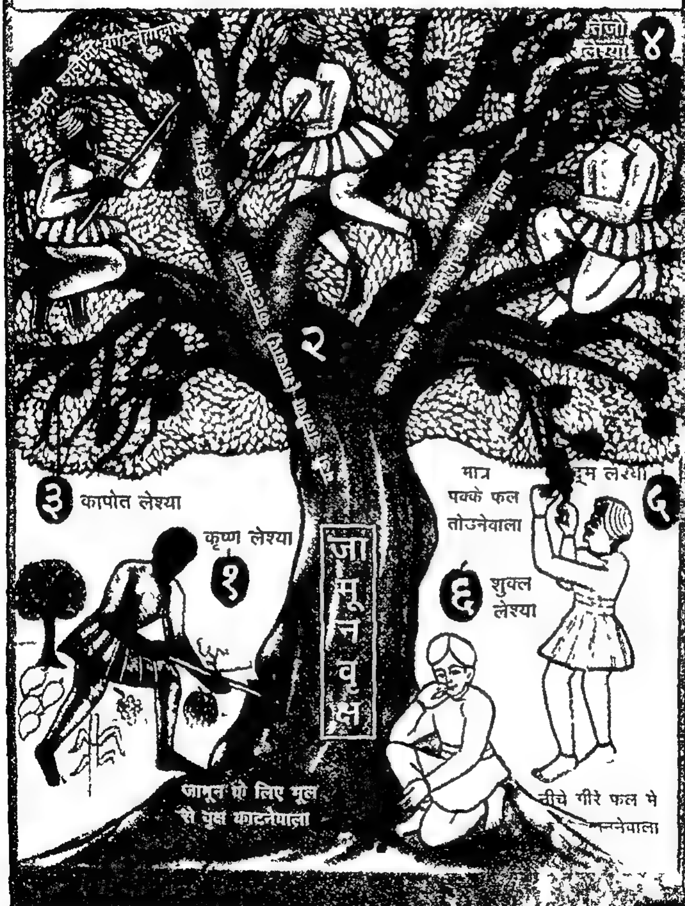
(क्रोध, मान, माया, लोभ)

(१) नरक -	लोभ	माया	मान	क्रोध	संख्यात गुण २
(२) तिर्यच -	मान	क्रोध	लोभ	माया	विशेष अधिक २
(३) मनुष्य -	माया	लोभ	क्रोध	मान	विशेष अधिक २
(४) देव -	क्रोध	मान	माया	लोभ	संख्यात गुण २

आहार संज्ञा वेदनीय कर्म के उदय से होती है, लोकसंज्ञा और ओघसंज्ञा ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होती है। शेष ७ संज्ञा मोहनीय कर्म क उदय से होती है।

सेवं भंते - सेवं भंते

जामून वृक्ष की उपमा से ६ लेश्या की पहचान



छः लेश्या

"श्री उत्तराध्ययन सूत्र के ३४ वें अध्ययन में"

छः लेश्या के ११ द्वार :- १ नाम २ वर्ण ३ रस ४ गंध ५ स्पर्श ६ परिणाम ७ लक्षण ८ स्थानक ९ स्थिति १० गति ११ चवन

१. नाम द्वार :- १ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

२. वर्ण द्वार :- १ कृष्ण लेश्या का वर्ण ·- जलसहित मेघ, भैस के सीग, अरीठे के बीज, गाडी का खंजन और आंख की कीकी इनसे भी अनंतगुणा काला वर्ण कृष्ण लेश्या का है।

(२) नील लेश्या का वर्ण :- अशोक वृक्ष, चास पक्षी की पंख और वैडुर्य रत्न इनसे भी अनंतगुणा नीला वर्ण नील लेश्या का है।

(३) कापोत लेश्या का वर्ण .- अलसी के फूल, कोयल की पंख, कबूतर की गर्दन कुछ लाल-कुछ काली इनसे भी अनत गुणा भूरा वर्ण कापोत लेश्या का है।

(४) तेजो लेश्या का वर्ण - उगता हुआ सूर्य, तोते की चोच, दीपक की शिखा इनसे भी अनंतगुणा लालवर्ण तेजो लेश्या का है।

(५) पद्म लेश्या का वर्ण :- हरताल, हल्दी, सण के फूल इनसे भी अनतगुणा पीला वर्ण पद्म लेश्या का है।

(६) शुक्ल लेश्या का वर्ण :- शंख, अंकरत्न, मोगरे का फूल, गाय का दूध, चांदी का हार इनसे भी अनंतगुणा श्वेत वर्ण शुक्ल लेश्या का है।

३. रस द्वार :- १. कृष्ण लेश्या का रस - कडवा तुम्बा, नीम का रस, रोहिणी नामक वनस्पति का रस इनसे भी अनंतगुणा कड़वा कृष्ण लेश्या का रस है।

२. नील लेश्या का रस :- सूंठ के रस के समान, पीपला मूल आदि के रस से भी अनंतगुणा तीखा रस नील लेश्या का है।

३. कापोत लेश्या का रस :- कच्ची केरी, कच्चे कोठे (कबीट) के रस से भी अनंतगुणा खट्टा कापोत लेश्या का रस है।

४. तेजो लेश्या का रस :- पक्के आम व पक्के कोठे के रस से अनंत गुणा कुछ खट्टा व कुछ मीठा रस तेजो लेश्या का है।

५. पद्म लेश्या का रस :- शराब व शहद से भी अनंतगुणा मधुर रस पद्मलेश्या का है।

६. शुक्ल लेश्या का रस :- खजूर, दाख (द्राक्ष) दूध व शक्कर आदि से भी अनंतगुणा मीठा रस शुक्ल लेश्या का है।

४. गंध द्वार :- (१) गाय, कुत्ता, सर्प आदि के मृत कलेवर से भी अनंत गुणी अधिक अप्रशस्त गंध प्रथम तीन लेश्या की होती है।

(२) कपूर, चंदन आदि को घोटते समय जैसी सुगंध निकलती है, उससे भी अनंत गुणी अधिक प्रशस्त सुगंध अन्तिम तीन लेश्याओ की होती है।

५. स्पर्श द्वार :- (१) करवत की धार, गाय की जीभ, बांस का पान आदि से भी अनंतगुणा तीक्ष्ण स्पर्श प्रथम तीन लेश्या का होता है।

(२) बूरनामक वनस्पति, सरसव के फूल, मक्खन और मखमल से भी अनंतगुणा कोमल स्पर्श अंतिम तीन लेश्याओ का होता है।

६. परिणाम द्वार :- लेश्या तीन प्रकार से परिणमती है :-

१ जघन्य २ मध्यम ३ उत्कृष्ट अथवा नव प्रकार से परिणमती है।

१ जघन्य का जघन्य २ जघन्य का मध्यम ३ जघन्य का उत्कृष्ट

४ मध्यम का जघन्य ५ मध्यम का मध्यम ६ मध्यम का उत्कृष्ट

७ उत्कृष्ट का जघन्य ८ उत्कृष्ट का मध्यम ९ उत्कृष्ट का उत्कृष्ट।

ऐसे ही नव के २७ भेद, २७ के ८१ भेद और ८१ के २४३ भेद होते है, इतने भेदो से लेश्या परिणमती है।

७. लक्षण द्वार :- १. कृष्ण लेश्या का लक्षण :- पांच आश्रव का सेवन करने वाला, पाप करने मे साहसिक, अजितेन्द्री आदि लक्षण कृष्ण लेश्या के है।

२ नील लेश्या का लक्षण :- ईर्ष्यावंत, तपरहित, मायावी, प्रमादी, रसलोलुपी ये लक्षण नील लेश्या के है।

३ कापोत लेश्या के लक्षण :- वक्रभाषी, वक्रकार्य करनेवाला, मुंह पर कुछ–पीठ पीछे कुछ ये लक्षण कापोत लेश्या के है।

४. तेजो लेश्या के लक्षण :- माया रहित, चपलता रहित, कुतुहल रहित, विनयवंत, दृढधर्मी, प्रियधर्मी, पाप से डरनेवाला ये लक्षण तेजो लेश्या के है।

५. पद्म लेश्या के लक्षण ·- क्रोध, मान, माया, लोभ को जिसने पतले किये है, अल्पभाषी, उपशांत, जितेन्द्रिय ये लक्षण पद्म लेश्या के है।

६. शुक्ल लेश्या के लक्षण ·- आर्तध्यान, रौद्रध्यान से सर्वथा रहित, धर्मध्यान, शुक्लध्यान सहित, १० प्रकार की चित्त समाधि सहित आत्मनिग्रही ये लक्षण शुक्ल लेश्या के है।

८. स्थानक द्वार :- असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी के जितने समय होते है तथा असंख्यात लोक के जितने आकाश प्रदेश होते है, उतने लेश्या के स्थानक जानना।

९. स्थिति द्वार :- १. कृष्ण लेश्या की स्थिति - जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम व अन्तर्मुहूर्त अधिक।

२. नील लेश्या की स्थिति ·- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट १० सागरोपम और पल्य का असंख्यातवां भाग अधिक।

३. कापोत लेश्या की स्थिति :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ३ सागरोपम और पल्य का असंख्यातवां भाग अधिक।

४. तेजो लेश्या की स्थिति :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट दो सागरोपम और पल्य का असंख्यातवां भाग अधिक।

५. पद्म लेश्या की स्थिति :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट १० सागरोपम और अन्तर्मुहूर्त अधिक।

६. शुक्ल लेश्या की स्थिति :- जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम और अन्तर्मुहूर्त अधिक।

यह समुच्चय लेश्या की स्थिति कही है।

१० गति द्वार :- (१) कृष्ण, नील, कापोत ये तीनो अप्रशस्त व अधर्म लेश्या है जिनके द्वारा जीव दुर्गति मे जाता है।

(२) तेजो, पद्म और शुक्ल ये तीनो प्रशस्त व धर्म लेश्या है जिनके द्वारा जीव सुगति मे जाता है।

११. चवन द्वार :- जीव का चवन (मरण) किसी भी लेश्या मे हो सकता है।

१- प्रथम विशेषता - जीव को जिस स्थान (गति) मे जाना हो उस स्थान की लेश्या होना या आना आवश्यक है।

२ - द्वितीय विशेषता - लेश्या के प्रारंभ काल मे या लेश्या के समाप्ति काल मे जीव का चवन नही होता है, किन्तु लेश्या के आये न्यूनतम एक मुहूर्त हो गया हो अथवा लेश्या के समाप्त होने मे न्यूनतम एक मुहूर्त शेष हो तब ही जीव का चवन होता है।

सेवं भंते - सेवं भंते

तीन जागरणा (जागरिका)

भगवती सूत्र शतक १२, उद्देशा १

श्रमण भगवान महावीर स्वामी को श्री गौतम स्वामी ने पूछा कि हे भगवान! जागरणा कितने प्रकार की है?

भगवन्त ने फरमाया हे गौतम! जागरणा तीन प्रकार की है -

१. धर्मजागरणा २. अधर्मजागरणा ३. सुदक्खु जागरणा

१ धर्मजागरणा के चार भेद :- १. आचार धर्म २ क्रिया धर्म ३. दयाधर्म ४. स्वभाव धर्म।

१ आचार धर्म के पांच भेद :- १. ज्ञानाचार २ दर्शनाचार ३ चारित्राचार ४. तपाचार ५. वीर्याचार।

(१) ज्ञानाचार के आठ भेद :-

१. **कालाचार :-** जिस समय जो सूत्र पढने की शास्त्र मे आज्ञा दी है उस समय ही उसे पढे।

२. **विनयाचार :-** ज्ञानदाता गुरु का विनय करे।

३. **बहुमानाचार :-** ज्ञान और ज्ञानी गुरु के प्रति भक्ति-बहुमान रखे।

४. **उपधानाचार :-** ज्ञान पढ़ते समय यथाशक्ति तप करे।

५. **अनिन्हवाचार :-** सूत्र के अर्थ को तथा गुरु के नाम को छिपावे नही।

६. **व्यन्जनाचार :-** अक्षर शुद्ध पढे।

७. **अर्थाचार :-** अर्थ शुद्ध करे।

८. **तदुभयाचार :-** अक्षर और अर्थ दोनो शुद्ध पढ़े।

(२) दर्शनाचार के आठ भेद :-

१. **निःशंकित :-** वीतराग के वचनो मे शंका नही करे।

२. **निःकांक्षित :-** परदर्शन की वांछा नही करे।

३. **निर्विचिकित्सा :** धर्मकरणी के फल मे संदेह नही रक्खे।

४. **अमूढ़दृष्ठि :-** अन्यमत के आडम्बर को देखकर मोहित नही होवे।

५. **उपबृहण :-** जिन (जिनेश्वर) धर्म की प्रशंसा करे।

६. **स्थिरीकरण :-** जिन (जिनेश्वर) धर्म से डिगते प्राणी को स्थिर करे।

७. **वात्सल्य :-** स्वधर्मी बन्धु से प्रेम करे, स्वधर्मी भाई को सच्चा सगा माने।

८. **प्रभावना :-** कृष्ण और श्रेणिक के समान अनेक प्रकार से जैन धर्म की प्रभावना करे, जैन धर्म दिपावे।

(३) चारित्राचार के आठ भेद :-५ समिति और ३ गुप्ति।

(४) तपाचार के १२ भेद :- छः बाह्य और छः आभ्यन्तर तप, इहलोक-परलोक के भौतिक सुख की वांछा रहित, मान-सम्मान की भावना रहित करे।

(५) वीर्याचार के तीन भेद :-

१. धार्मिक कार्यो मे बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम छिपावे नही।

२. यथाशक्ति धर्म का कार्य करे।

३. पूर्वोक्त आचार धर्म के (८ + ८ + ८ + १२) ३६ बोल मे उद्यम करे।

(२) क्रिया धर्म के ७० भेद :- ४ पिण्ड विशुद्धि, ५ समिति, ३ गुप्ति, १२ भावना, १२ भिक्षुपडिमा, ५ इन्द्रिय निग्रह, २५ प्रकार की प्रतिलेखना, ४ अभिग्रह।

(३) दया धर्म के आठ भेद :-

१. स्वदया :- अपनी आत्मा को पाप से बचावे।

२. परदया :- अन्य जीवो की रक्षा करे।

३. द्रव्यदया :- देखादेखी या लज्जा से या कुलाचार से दया पाले।

४. भावदया :- ज्ञान के द्वारा जीव को अपने जैसा जानकर उस पर अनुकम्पा करे तथा जीव को धर्म मे जोड़कर उन्हे परम सुखी बनाने का भाव करे।

५. व्यवहारदया :- श्रावक को जैसी दया पालने के लिए कहा है उसी प्रकार पाले (घर के काम करते समय यतना रखे)।

६. निश्चयदया :- अपनी आत्मा को कर्म बंध से छुड़ाना। यह दया छट्ठे गुणस्थानवर्ती शुभयोगवाले अनारंभी निर्ग्रन्थो मे होती है।

७. स्वरूपदया :- किसी जीव को मारने के लिए उसको पहले अच्छी तरह खिलाते है, सार संभाल लेते है व उसके शरीर को पुष्ट करते है। यह ऊपर से दिखावा मात्र है। यह उत्तराध्ययन सूत्र के सातवे अध्ययन मे वर्णित बकरे के अधिकार से समझना।

८. अनुबंधदया :- जो जीव को ऊपर से दु:ख देवे परन्तु अंतर से उसको सुख देने की भावना है। जैसे - माता पुत्र को रोग दूर करने के लिए कटुक दवा पिलाती, दु:ख देती हुई दिखाई देती है। परन्तु अन्तर हृदय से पुत्र का हित चाहती है। जैसे - पिता, पुत्र को हित शिक्षा देने के लिए ऊपर से तर्जना करे, मारे परन्तु हृदय से उसको सद्गुणी बनाना (हित) चाहता है। जैसे - डॉक्टर रोगी के अंगो का चीर-फाड़ करता है उस समय वह भयंकर दिखता है। परन्तु उसके मन मे परिणाम रोगी को स्वस्थ-सुखी करने का है।

(४) स्वभाव धर्म के दो भेद :- १ जीव स्वभाव धर्म और २. अजीव स्वभाव धर्म। जीव स्वभाव धर्म के दो भेद :- जीव स्वभाव से

शुद्ध और कर्म के संयोग से अशुद्ध। जीव को विषय-कषाय के संयोग से विभाव परिणति होती है, वह जीव का अशुद्ध स्वभाव धर्म है और उस विभाव परिणति को दूर करके जीव अपने ज्ञानादि गुणो मे रमण करता है, वह जीव का शुद्ध स्वभाव धर्म है।

पुद्गल का एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो स्पर्श मे रहना पुद्गल का शुद्ध स्वभाव धर्म है।

इससे अधिक वर्ण आदि मे जाना पुद्गल का विभाव धर्म है।

धर्म-अधर्म-आकाश और काल इन चारो के क्रमश· चलनगुण, स्थिरगुण, अवगाहनागुण और वर्तनागुण ये इनके शुद्ध स्वभाव धर्म है। ये अपने-अपने स्वभाव को छोडते नही है।

(२) अधर्म जागरणा :- गृहस्थ मे धन, कुटुम्ब, परिवार आदि का संयोग मिलाना व इनके लिए आरम्भ आदि करना व उन पर दृष्टि रखना एवं उनकी रक्षा करना तथा उस सम्बन्ध मे चिता करना यह अधर्म जागरणा है।

(३) सुदक्खु जागरणा :- सु-अर्थात् अच्छी दक्खु अर्थात् दक्ष-चतुराई की जागरणा। यह सुदक्खु जागरणा श्रावक को होती है। क्योकि श्रावक सम्यग् ज्ञान और सम्यग् दर्शन सहित होने से धन, कुटुम्ब, आरभ-परिग्रह आदि को खराब जानता है तथा देश से निवृत्त भी होता है। उदयभाव से संसार मे रहता है किन्तु तीव्र मूर्च्छित होकर नही। श्रावक तीन मनोरथ का चिन्तन करता है। इसे सुदक्खु जागरणा कहते हैं।

श्रावक के २१ गुण

उववाई सूत्र –

१. श्रावकजी नवतत्त्व और २५ क्रिया के जानकार होवे।

२ श्रावकजी सहायता के अभाव मे धर्मकरणी छोडे नही।

३. श्रावकजी देव आदि के डिगाने पर भी धर्म से डिगे नही।

४ श्रावकजी जैन धर्म मे शंका रखे नही।

५. श्रावकजी जो सूत्रो का अर्थ ज्ञान मिला, उसके निर्णय मे प्रमाद नही करे।

६ श्रावकजी की हड्डी-हड्डी की मिजा धर्म के रंग से रंगी हुई हो।

७ श्रावकजी मेरा आयुष्य अस्थिर है और जैन धर्म सार है ऐसा चिन्तन करे।

८. श्रावकजी स्फटिक रत्न जैसे निर्मल होवे।

९ श्रावकजी घर के द्वार दान के लिये हमेशा खुले रखे।

१० श्रावकजी प्रतिमाह मे २-४-६ पौषध करे।

११ श्रावकजी चाहे जहॉ जाये, परन्तु उनके प्रति अविश्वास उत्पन्न नही हो - ऐसे सदाचारी हो।

१२. श्रावकजी लिये हुए व्रत-पच्चक्खाण को निर्मल पाले।

१३. श्रावकजी १४ प्रकार का निर्दोष और सूझता दान बहरावे।

१४ श्रावकजी धर्म उपदेश सुने और दूसरे को सुनावे।

१५ श्रावकजी तीन मनोरथ का चितन करे।

१६ श्रावकजी चार तीर्थ के गुणग्राम, सेवा-भक्ति आदि करे।

१७. श्रावकजी नया-नया ज्ञान सीखे।

१८. श्रावकजी कोई मनुष्य धर्म पाया हो तो उसकी सहायता करे।

१९ श्रावकजी दोनो समय प्रतिक्रमण करे।

२०. श्रावकजी सभी जीवो के साथ मैत्री भाव रखे।

२१ श्रावकजी यथा शक्ति तपस्या करे।

सेव भते - सेव भते

तीर्थंकर के ३४ अतिशय

समवायांग सूत्र में . . . .

अतिशय :- सामान्य केवली मे न हो, ऐसी असाधारण विशेषता, विशिष्ट शुभनाम तथा उच्चगोत्र के उदय से होवे उसे अतिशय कहते है।

१. तीर्थंकर के केश-नख नही बढे सुशोभित रहे।

२. शरीर निरोग रहे।

३. लोही-मांस गाय के दूध जैसा (मीठा) होवे।

४. श्वासोश्वास पद्मकमल जैसा सुगंधित होवे।

५. आहार-निहार अदृश्य होवे।

६. आकाश मे धर्मचक्र चले।

७. आकाश मे ३ छत्र - २ चामर बिजाता हुआ दिखे।

८. आकाश मे पादपीठ सहित सिंहासन चले।

९. आकाश मे इन्द्रध्वज चले।

१०. अशोक वृक्ष होवे।

११. भामण्डल होवे।

१२. विषमभूमि सम होवे।

१३. कांटे उल्टे हो जावे।

१४. छहो ऋतु अनुकूल होवे। वसंत (चैत्र, वैशाख), ग्रीष्म (ज्येष्ठ, आषाढ़), वर्षा (श्रा., भाद्र.), शरद (आश्विन, कार्तिक), हेमंत (मिगसर, पोष), शीत (माघ, फाल्गुन)।

१५. अनुकूल वायु चले।

१६. पांच वर्ण के फूल बरसे।

१७. अशुभ पुद्गलो का नाश होवे।

१८. सुगंधित वर्षा से भूमि सिंचित होवे।

१९. शुभ पुद्गल परिणमे।

२०. योजनगामी वाणी की ध्वनि होवे।

२१. अर्धमागधी भाषा मे देशना देवे।

२२. सर्व सभा अपनी-अपनी भाषा मे समझे।

२३. जन्मवैर-जातिवैर शांत होवे।

२४ अन्यमती भी देशना सुने व विनय करे।

२५. प्रतिवादी निरूत्तर बने।

२६. २५ योजन तक किसी प्रकार का रोग नही होवे।

२७. महामारी प्लेग न होवे।

२८. उपद्रव न होवे।

२९. स्वचक्र (अपने राज्य की सेना) का भय न होवे।

३०. परलश्कर (शत्रु सैन्य) का भय न होवे।

३१ अतिवृष्टि न होवे।

३२. अनावृष्टि न होवे।

३३ दुष्काल न पडे।

३४ पहले उत्पन्न हुए उपद्रव शांत होवे।

※ २, ३, ४, ५ ये अतिशय जन्म से होते है। १ तथा २१से ३४ केवलज्ञान होने के बाद उत्पन्न होते है, शेष १५ देवकृत होते है।

सेव भंते - सेव भते

ब्रह्मचर्य की ३२ उपमा

प्रश्नव्याकरण सूत्र के ९ वें अध्ययन में :-

लौकिक पदार्थ के महत्त्व आदि को समझाने के लिये मिलता-जुलता लोक प्रसिद्ध दृष्टांत को देना उपमा है।

१. ज्योतिषी समूह मे	चन्द्रमा कीमती प्रधान	वैसे सभी व्रतो मे ब्रह्मचर्य व्रत
२. सब खदानो मे	सोने की खदान	मूल्य की अपेक्षा
३. सब रत्नों मे	वैडूर्य रत्न	मूल्य की अपेक्षा
४. सब आभूषणो मे	मुकुट	स्थान की अपेक्षा
५. सब वस्त्रो मे	क्षेमयुगल वस्त्र	गुण की अपेक्षा
६. सब चन्दन मे	गोशीर्ष	गुण की अपेक्षा
७. सब फूलो मे	अरविदकमल	शोभा की अपेक्षा
८. सब औषधीश्वर मे	चूल हेमवन्त पर्वत	विशालता की अपेक्षा
९. सब नदियो मे	सीता सीतोदा	विशालता की अपेक्षा
१०. सब समुद्रो मे	स्वयंभूरमण	विशालता की अपेक्षा
११. सब पर्वतो मे	मेरुपर्वत	ऊँचाई की अपेक्षा
१२. सब हाथियो मे	ऐरावत हाथी	धैर्य की अपेक्षा
१३. सब चतुष्पदो मे	केशरी सिह	शूरत्व की अपेक्षा
१४. सब भवनपतियो मे	धरणेन्द्र	पद की अपेक्षा
१५. सब सुवर्णकुमार देवो मे	वेणुदेवेन्द्र	पद की अपेक्षा
१६ सब देवलोको मे	ब्रह्म देवलोक	विशालता की अपेक्षा

१७. सब सभाओ मे	सुधर्मासभा	उपस्थिति की अपेक्षा
१८ सब देवो की स्थिति मे	सर्वार्थसिद्ध विमान की	सुख की अपेक्षा
१९ सब दानो मे	अभयदान	प्रिय की अपेक्षा
२० सब रंगो मे	किरमची रंग	न उतरने की अपेक्षा
२१ सब संस्थानो मे	समचौरस	सर्वांग की अपेक्षा
२२ सब संहननो मे	वज्रऋषभनाराच	दृढता की अपेक्षा
२३. सब लेश्याओ मे	शुक्ललेश्या	शुभ की अपेक्षा
२४ सब ध्यानो मे	शुक्लध्यान	प्रशस्तता की अपेक्षा
२५ सब ज्ञानो मे	केवलज्ञान	सपूर्णता की अपेक्षा
२६ सब क्षेत्रो मे	महाविदेह क्षेत्र	विशालता की अपेक्षा
२७ सब साधुओ मे	तीर्थंकर	अतिशय की अपेक्षा
२८ सब गोलपर्वतों मे	कुण्डल पर्वत	विशालता की अपेक्षा
२९ सब वृक्षो मे	सुदर्शन वृक्ष	देवाधिष्ठित की अपेक्षा
३० सब वनो मे	नदनवन	आनंदप्रद की अपेक्षा
३१ सब ऋद्धि मे	चक्रवर्ती की	स्वामित्व की अपेक्षा
३२ सब योद्धाओ मे	वासुदेव	सत्त्व की अपेक्षा

सेव भते - सेव भते

१७ प्रकार के मूर्ख

१. दान मे अंतराय देनेवाला।

२. धर्म चर्चा के समय व्यर्थ बात करने वाला।

३. भोजन करते समय क्रोध करने वाला।

४. बिना कारण लड़ाई करने वाला।

५. सज्जनो का अपमान करने वाला।

६. दान देकर पश्चाताप करने वाला।

७. दान देकर अहंकार करने वाला।

८. उपकारी का उपकार नही मानने वाला।

९. अपनी प्रशंसा करने वाला।

१०. शांत हुए क्लेश को पुनः उत्पन्न करने वाला।

११. सकड़े मार्ग मे दौड़ने वाला।

१२. शक्ति होने पर भी सेवा नही करने वाला।

१३. बिना कारण हंसने वाला।

१४. मार्ग मे चलते हुए खाने वाला।

१५. गई बात को सोचने वाला।

१६. बिना बुलाये बोलने वाला।

१७. दो मनुष्य के बीच मे जाकर बात करने वाला।

सेव भते - सेवं भंते

१८ पाप के फल

इस भव में	आते भव में
(१) हिसा (हत्या) करे तो	अल्पायुषी, गर्भ मे ही मरे।
(२) झूठ बोले तो	गूंगा, बेसुरा बने।
(३) चोरी करे तो	बिना हाथ, पैर, ऑख का बने।
(४) बलात्कार करे तो	नपुंसक बने।
(५) एक पैसा भी दान न दे तो	भिखमंगा, दरिद्र बने।
(६) क्रोध करे तो	सर्प, सिह, बंदर आदि बने।
(७) मान करे तो	दास, भेडिया, बकरा बने।
(८) माया करे तो	स्त्री बने, जेल मे जावे।
(९) लोभ करे तो	व्यापार मे खोट जावे।
(१०) झूठा राग करे तो	ज्यादा परिवारवाला बने।
(११) झूठा द्वेष करे तो	हरिजन, सूअर, कुत्ता बने।
(१२) कलह करे तो	क्लेशमयी, कुटुम्ब, मित्रादि मिले।
(१३) कलंक दे तो	सीता-अंजना जैसी दशा होवे।
(१४) चुगली करे तो	चील, शिकारी से परेशान होवे।
(१५) निदा करे तो	कोढी, कुरूप बने।
(१६) रुचि-अरुचि करे तो	जंगल मे भील आदि बने।
(१७) माया मृषा करे तो	कौआ, चील आदि बने।
(१८) कुदेव-कुगुरु को वंदे तो	ऊँट, पाडा, गधा वगैरह बने।

सेव भते - सेवं भते

तीर्थंकर नाम (गोत्र) बांधने के २० कारण

ज्ञाता सूत्र अध्ययन ८ वाँ

(१) अरिहंत भगवान के गुण कीर्तन करने से – रेवती गाथापत्नीवत्
(२) सिद्ध भगवान के गुण कीर्तन करने से – काका सुपार्श्ववत्
(३) आठ प्रवचन की आराधना करने से –
(४) गुणवंत गुरू (आचार्य) के .... – कोणिक पुत्र उदायीवत्
(५) स्थविर (वृद्धमुनि) के .... –
(६) बहुश्रुत (उपाध्याय) के .... –
(७) तपस्वी के – नारदवत्
(८) सीखे हुए ज्ञान को बार-बार फेरने से –
(९) समकित निर्मल पालने से – सुलसाश्राविकावत्
(१०) विनय करने से – रोहिणीवत्
(११) उभयकाल (यथासमय) आवश्यक करने से – बलदेववत्
(१२) लिए हुए व्रत-प्रत्याख्यान निर्मल पालने से – शखवत्
(१३) शुभ (धर्म-शुक्ल) ध्यान ध्याने से – मेघरथवत्
(१४) १२ प्रकार की निर्जरा (तप) करने से – नंदनमुनिवत्
(१५) अभयदान-सुपात्रदान देने से – देवकीवत्
(१६) १० प्रकार की वैयावच्च करने से – श्रीकृष्णवत्
(१७) चतुर्विध संघ को शांति-समाधि देने से – श्रेणिकवत्
(१८) नया-नया अपूर्व तत्व ज्ञान सीखने से –
(१९) सूत्र-सिद्धांत की भक्ति करने से –
(२०) मिथ्यात्व का नाश और समकित उद्योत करने से – अम्बडश्रावकवत्

जीव अनन्तानन्त कर्मों को खपाते है। इन सत्कार्यों को करते हुए उत्कृष्ट रसायन (भावना) आवे तो तीर्थकर नाम कर्म वांधे।

दया - धर्म

श्री भगवती सूत्र में :-

गौतम स्वामी ने भगवान महावीर स्वामी से पूछा कि साधु कितने विस्वा दया पालते है और श्रावक कितने विस्वा दया पालते है?

★ साधु २० विस्वा दया पालते है - ५ स्थावर और ५ त्रस (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पचेन्द्रिय) इन दस के अपर्याप्त और पर्याप्त कुल २०।

★ इनमे से श्रावक १० की दया नही पाल सकता है क्योकि स्थावर की विराधना से वह नही बच सकता। जानबूझकर त्रस की विराधना नही करता है, परन्तु श्रावक मकान बंधवाता है, खेतीवाड़ी करता है, बाग बगीचे लगाता है, कुंए बंधवाता है, इसलिए १० विस्वा कम हुए।

★ त्रस के दो भेद :- १. संकल्पी और २. आरंभी।

श्रावक संकल्पी हिसा नही करता जैसे - कसाई पशुओ की गर्दन पर छुरी चलाता है उस तरह जानबूझकर हिसा नही करता है, परन्तु आरंभी हिसा से नही बच सकता है, क्योकि श्रावक विवाह करता है, रसोई करता है, भट्ठी खुदवाता है, मिल-जिन, कारखाना चलाता है और भी दूसरे व्यापार करता है। इसलिए ५ विस्वा कम हो गये।

★ आरभी के दो भेद :- १ सापराधी २. निरपराधी।

श्रावक सापराधी की दया नही पाल सकता। (निरपराधी की दया पालता है) क्योकि श्रावक के ऊपर घर का, कुटुम्ब का, परिवार का, जाति का, देश का, राष्ट्र का भार रहता है। इसलिए उनकी रक्षा करना जरूरी है। उनकी रक्षा के लिए घर मे शस्त्र, भाला, बरछी, बंदूक, पिस्तौल आदि रखता है।

मानलो घर मे चोर घुस गया हो तो अन्याय का प्रतिकार करता है। दण्ड दिलाता है इसलिए २।। (ढाई) विस्वा ओर कम हो गये।

★ निरपराधी के दो भेद :- १ सापेक्ष २ निरपेक्ष

श्रावक निरपेक्ष की दया पालता है, सापेक्ष की दया नही पाल सकता। जैसे - घोड़े को चाबुक, बैल को आर, हाथी को अंकुश लगाता है। जानवरो के शरीर मे जीव पड़े तो दवा आदि कराता है, इससे १। (सव्वा) विस्वा कम हो गये। १। विस्वा की श्रावक दया पाल सकता है।

ऐसी दया आनंदजी, कामदेवजी, शंखजी, पुष्कलीजी, चूलणिपियाजी आदि ने पाली थी।

सेवं भंते - सेवं भंते

जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल

(१) मोक्ष की अभिलाषा करने से।

(२) उग्र तपस्या करने से।

(३) गुरु मुख से आगम सुनने से।

(४) आगम सुनकर वैसा ही कार्य करने से।

(५) पांच इन्द्रियो का दमन करने से।

(६) छ· काय जीवो की रक्षा करने से।

(७) भोजन करते समय साधु-साध्वी की भावना भाने से।

(८) सद्ज्ञान सीखने व सिखाने से।

(९) नियाणा रहित एक कोटि से व्रत मे रहता हुआ नव कोटि तक व्रत-प्रत्याख्यान करने से।

(१०) १० प्रकार की वैयावच्च (सेवा) करने से।

(११) कषाय को पतली करके निर्मूल करने से।

(१२) शक्ति होते हुए क्षमा करने से।

(१३) लगे हुए पापो की तुरंत आलोचना करने से।

(१४) लिये हुए व्रतो को निर्मल पालने से।

(१५) अभयदान-सुपात्रदान देने से।

(१६) शुद्ध मन से शील (ब्रह्मचर्य) व्रत पालने से।

(१७) पाप रहित मधुर वचन बोलने से।

(१८) लिए हुए संयम भार को अखंड पालने से।

(१९) धर्मध्यान-शुक्लध्यान ध्याने से।

(२०) हर महीने ६-६- पौषध करने से।

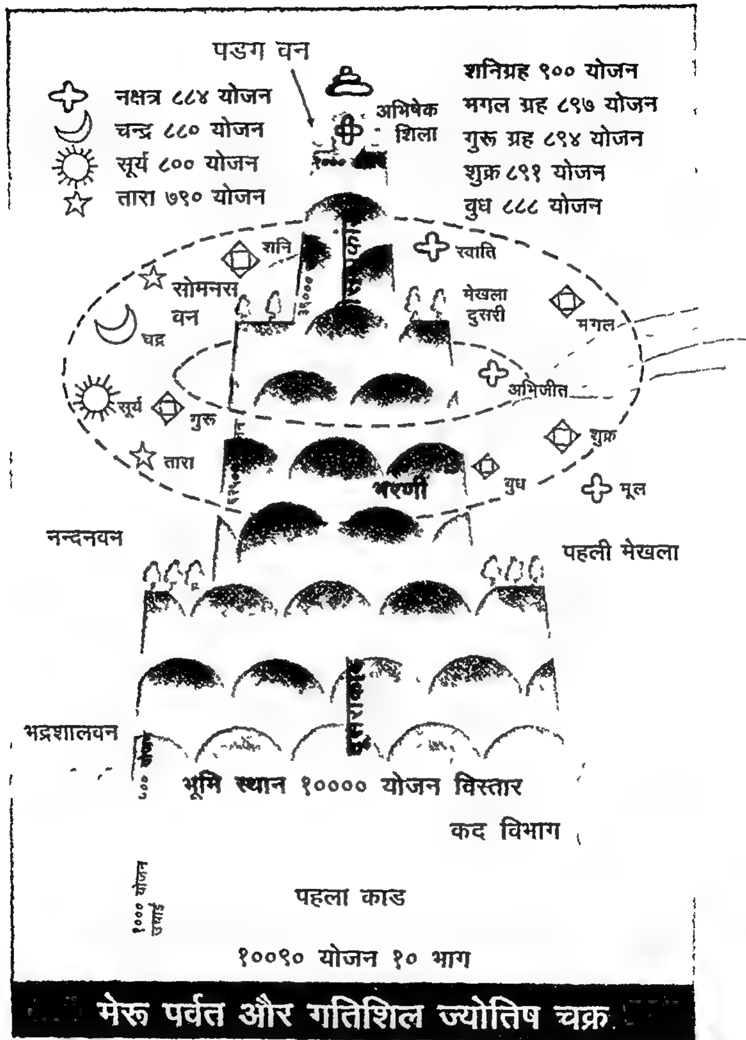
(२१) उभयकाल (यथासमय) आवश्यक (प्रतिक्रमण) करने से।

(२२) पिछली रात्रि मे धर्म जागरण करते हुए तीन मनोरथ आदि का चितन करने से।

(२३) मृत्यु के समय आलोचनादि से शुद्ध होकर समाधि पण्डितमरण मरने से।

इन २३ (ऊपर कहे) बोलो की जघन्य आराधना से जीव मंदगति से मोक्ष जावे तथा उत्कृष्ट आराधना से शीघ्र मोक्ष मे जावे।

सेवं भंते - सेवं भते



मेरु पर्वत और गतिशिल ज्योतिष चक्र

परम कल्याण के ४० बोल

प्रश्न - परम कल्याण और अपरम कल्याण किसको कहते है?

उत्तर - सिद्ध पद परम कल्याण है तथा इन्द्रपद, चक्रीपद, अपरम कल्याण है।

	गुण	दृष्टांत	सूत्र की साक्षी
१	मिले हुए निमित्त पर शुभ भावना भाने से परम कल्याण होवे	**आर्द्रकुमार**	सूयगडाग
२	समकित निर्मल पालने से	**श्रेणिक महाराज**	ठाणांग
३	पांच महाव्रत निर्मल पालने से	**गौतम स्वामी**	भगवती
४	निदान रहित तपस्या करने से	**तामली तापस**	भगवती
५	श्रद्धापूर्वक ज्ञानी का अनुकरण करने से	**वरुणनाग का बाल मित्र**	भगवती
६	चतुर्विध संघ की वैयावच्च करने से	**सनत्कुमार चक्री पूर्वभव में**	भगवती
७	मोह छोडकर पुत्र का हित चाहने से	**उदायन राजा**	भगवती
८	चर्चा से वादियो को जीतने से	**मंडुक श्रावक**	भगवती
९	कष्ट सहकर भी जीव रक्षा करने से	**मेघकुमार (हाथी के भव में)**	ज्ञाता
१०	प्रमाद छोड़कर अप्रमादी होने से	**शैलक राजर्षि**	ज्ञाता
११	ग्लानि रहित गुरू की सेवा करने से	**पंथकमुनि**	ज्ञाता

१२. मित्रो मे माया और वचन भंग नही करने से	**मल्लिनाथ के पूर्वभव के छ मित्र**	ज्ञाता
१३. तन व धन की ममता हटाने से	**अर्हन्नक श्रावक**	ज्ञाता
१४. विषय सुख मे गृद्ध नही होने से	**जिनपाल**	ज्ञाता
१५. प्रभु दर्शन आदि का अभिग्रह करने से	**पांच पांडव**	ज्ञाता
१६. जीव रक्षा हेतु संथारा करने से	**धर्मरूचि अणगार**	ज्ञाता
१७. सत्य बात निशंक, सविनय कहने से	**आनंद श्रावक**	उपासक
१८. देवआदि के उपसर्ग सहने से	**कामदेव श्रावक**	उपासक
१९. तीन योग निश्चल रखने से	**गजसुकुमाल मुनि**	अन्तगड
२०. धर्मदलाली करने से	**श्रीकृष्ण महाराज**	अन्तगड
२१. देव गुरु वंदन मे निर्भीक होने से	**सुदर्शन श्रमणोपासक**	अन्तगड़
२२. समभाव सहित क्षमा करने से	**अर्जुनमुनि**	अन्तगड़
२३. उग्र तप करने से व पारणे में उज्झित आहार करने से।	**धन्नामुनि**	अनुत्तरोववाई
२४. उदारतापूर्वक सुपात्रदान देने से	**सुमुख गाथापति**	सुखविपाक
२५. कष्ट पडने पर भी नियम का निर्मल पालन करने से।	**अंबड के ७०० शिष्य**	उववाई

२६ शक्ति होने पर भी क्षमा करने से	**परदेशी राजा**	राजप्रश्नीय
२७. सदैव अनित्य भावना भाने से	**भरत चक्रवर्ती**	जंबूद्वीप पन्नति
२८ तृष्णा का त्याग करने से	**कपिल ब्राह्मण**	उत्तराध्ययन
२९. एकत्त्व भावना भाने से	**नमिराजऋषि**	उत्तराध्ययन
३०. इन्द्रिय का दमन करने से	**हरिकेशी मुनि**	उत्तराध्ययन
३१. धर्म से डिगते हुए को स्थिर करने से	**राजमतीजी**	उत्तराध्ययन
३२. धर्म चर्चा करने से	**केशी-गौतम**	उत्तराध्ययन
३३. उपसर्ग आने पर भी धैर्य रखने से	**खंधकमुनि**	उत्तराध्ययन
३४ जिनराज की भक्ति करने से	**प्रभावती रानी**	उत्तराध्ययन
३५. शुद्ध मन से शील पालने से	**सुदर्शन सेठ**	सुदर्शन-चरित्र
३६. अशुभ परिणाम छोडने से	**प्रसन्नचंद्र राजर्षि**	श्रेणिक-चरित्र
३७ उत्कृष्ट भाव से मुनि की सेवा करने से	**बाहुबली का पूर्वभव**	ऋषभ चरित्र
३८. प्राणो का मोह छोड़कर भी दया पालने से	**मेघरथ राजा**	शांतिनाथचरित्र
३९ सहोदर भाई का मोह छोडने से	**बलदेव**	६३ शलाघा पुरूष चरित्र
४०. व्रत से गिरते ही सावधान होने से	**अरणिक मुनि**	आवश्यक

सेव भंते - सेव भते

२५ क्रिया

※ ठाणांग सूत्र में २५ क्रिया का थोकड़ा चलता है।

जिससे कर्मों का बंध हो उसे क्रिया कहते हैं।

१. काइया क्रिया :- (शरीर आदि के व्यापार से होनेवाली हलन-चलन आदि क्रिया)। काइया क्रिया के दो भेद :-

(१) अणुवरय काइया :- जब तक यह शरीर पाप से निवर्तें नही, तब तक लगने वाली।

(२) दुप्पऊत्त काइया .- दुष्ट प्रयोग मे शरीर प्रवर्तांने से लगने वाली।

२. अहिगरणिया क्रिया :- (चाकू-छूरी आदि से लगनेवाली क्रिया)। अहिगरणिया क्रिया के दो भेद :-

(१) संयोजनाहिगरणिया :- तलवार, शस्त्रादि प्रवर्तांने से।

(२) निव्वत्तणाहिगरणिया :- नये शस्त्र आदि का निर्माण करने से।

३. पाउसिया क्रिया :- (ईर्ष्या, द्वेष आदि अशुभ परिणामों से लगनेवाली क्रिया)। पाउसिया क्रिया के दो भेद :-

१. जीव पाउसिया :- जीव पर द्वेष करने से।

२. अजीव पाउसिया .- अजीव पर द्वेष करने से।

४. पारितावणिया क्रिया :- (किसी को मारपीट करना अथवा कठोर वचन कहकर क्लेश पहुँचाना, दु खी करना, कष्ट देना)। पारितावणिया क्रिया के दो भेद :-

१. सहत्थ पारितावणिया .- स्वयं अपने आपको तथा दूसरों को परिताप उपजाने से।

२. परहत्थ पारितावणिया :- दूसरों के द्वारा अपने आपको तथा स ो को परिताप उपजाने से।

५. पाणाइवाइया क्रिया :- (प्राणो का नाश करने वाली क्रिया)। पाणाइवाइया क्रिया के दो भेद -

१ सहत्थ पाणाइवाइया :- अपने हाथो से अपने तथा अन्य के प्राणो का हरण करने से।

२ परहत्थ पाणाइवाइया :- दूसरो के द्वारा अपने तथा दूसरो के प्राणो का हरण करने से।

६. आरंभिया क्रिया :- (हिंसा से लगने वाली क्रिया)।

आरंभिया क्रिया के दो भेद :-

१ जीव आरभिया .- जीवो की हिसा करने से।

२ अजीव आरभिया - कपडा, कागज, मृतकलेवर आदि अजीव वस्तुओ को नष्ट करने से।

७. परिग्गहिया क्रिया :- (ममत्व भाव से लगने वाली क्रिया)। परिग्गहिया क्रिया के दो भेद :-

१ जीव परिग्गहिया :- कुटुम्ब, परिवार, दास, गाय, धान्य-फल आदि त्रस-स्थावर जीवो पर ममत्व भाव रखने से।

२ अजीव परिग्गहिया - सोना, मकान, वस्त्र आदि अजीवो पर ममत्व भाव रखने से।

८. मायावत्तिया क्रिया :- (कपट करने से)।

मायावत्तिया क्रिया के दो भेद :-

१ आयभाव-वकणया :- अन्तर मे कुछ और बाहर मे कुछ इस प्रकार आत्मा मे ठगाई के भाव।

२ परभाव वकणया - खोटे नाप-तोल करके दूसरो को ठगना, विश्वासघात करना।

९. अपच्चक्खाणवत्तिया क्रिया:- (विरति के अभाव मे)। अपच्चक्खाणवत्तिया क्रिया के दो भेद .-

१. जीव अपच्चक्खाणवत्तिया :- जीव के पच्चक्खाण नही करने से।

२. अजीव अपच्चक्खाणवत्तिया :- अजीव के पच्चक्खाण नही करने से।

१०. मिच्छादंसणवत्तिया क्रिया :- (कुश्रद्धा से लगने वाली क्रिया)। मिच्छादंसणवत्तिया क्रिया के दो भेद :-

१. उणाइरित्तमिच्छादंसणवत्तिया :- जिनेश्वर देव के कथन से कम या अधिक श्रद्धा करे।

२. तवाइरित्तमिच्छादंसणवत्तिया :- जिनेश्वर देव के कथन से विपरीत श्रद्धा करे।

११. दिट्ठिया क्रिया :- (राग-द्वेष पूर्वक देखने से लगनेवाली)। दिट्ठिया क्रिया के दो भेद :-

१. जीव दिट्ठिया :- हाथी, घोड़ा आदि देखने से।

२. अजीव दिट्ठिया :- चित्र, शिल्प आदि देखने से।

१२. पुट्ठिया क्रिया :- (राग-द्वेषपूर्वक स्पर्श से लगनेवाली)। पुट्ठिया क्रिया के दा भेद :-

१. जीव पुट्ठिया :- जीव के स्पर्श से।

२. अजीव पुट्ठिया :- अजीव के स्पर्श से।

१३. पाडुच्चिया क्रिया :- (ईर्ष्या करने से)। पाडुच्चिया क्रिया के दो भेद :-

१. जीव पाडुच्चिया :- जीवो पर ईर्ष्या करने से तथा उनका बुरा चिंतन करने से।

२. अजीव पाडुच्चिया :- अजीव पर ईर्ष्या करने से तथा उनका बुरा चितन करने से।

१४. सामन्तोवणिवाइया क्रिया :- (अनेक लोग इक्कट्ठे होकर निंदा, विकथा करे, ऋद्धि-वैभव की प्रशंसा करे)।

सामन्तोवणिवाइया क्रिया के दो भेद :-

१. जीव सामन्तोवणिवाइया :- जीव का संग्रह करे, उनको देखकर तथा उनकी प्रशंसा सुनकर हर्षित होने से।

२. अजीव सामन्तोवणिवाइया .- अजीव का संग्रह करे, उनको देखकर तथा उनकी प्रशंसा सुनकर हर्षित होने से।

१५. साहत्थिया क्रिया :- (अपने हाथो से मारपीट करने से)।

साहत्थिया क्रिया के दो भेद :-

१. जीव साहत्थिया :- अपने हाथो से जीवो का हनन करने से।

२. अजीव साहत्थिया :- तलवार आदि द्वारा अजीव का छेदन भेदन करने से।

१६. नेसत्थिया क्रिया :- (फेकने से लगने वाली क्रिया)।

नेसत्थिया क्रिया के दो भेद .-

१.जीव नेसत्थिया :- जीव (खटमल, जूं आदि) को फेकने से।

२. अजीव नेसत्थिया :- अजीव (लकडी, वस्त्र आदि) को फेकने से।

१७. आणवणिया क्रिया :- (दूसरो के द्वारा मंगवाई जाने से तथा आज्ञा देकर कराई जाने से लगने वाली क्रिया)

आणवणिया क्रिया के दो भेद .-

१. जीव आणवणिया .- जीव को मंगवाने से।

२. अजीव आणवणिया :- अजीव को मंगवाने से।

१८. वेदारणिया क्रिया :- (दलाली करने से)।

वेदारणिया क्रिया के दो भेद :-

१. जीव वेदारणिया :- जीव की दलाली करने से।

२ अजीव वेदारणिया :- अजीव की दलाली करने से।

१९. अनाभोगवत्तिया क्रिया :- (उपयोग शून्यता से लगने वाली क्रिया)। अनाभोगवत्तिया क्रिया के दो भेद :-

१. अणाउत्त आयणता :- असावधानी से वस्त्रादि को ग्रहण करने से।

२. अणाउत्त पम्मज्जणता :- असावधानी से पात्रादि को पूजने से।

२०. अणवकंखवत्तिया क्रिया :- (हित-अहित की उपेक्षा से लगने वाली क्रिया)। अणवकंखवत्तिया क्रिया के दो भेद -

१. आयशरीर :- अपने शरीर आदि को हानि पहुंचाने से।

२. परशरीर :- दूसरो को हानि पहुंचाने से।

२१. पेज्जवत्तिया क्रिया :- (राग से)। पेज्जवत्तिया क्रिया के दो भेद :-

१. मायावत्तिया :- रागपूर्ण माया से लगने वाली क्रिया।

२. लोभवत्तिया :- रागपूर्ण लोभ से लगने वाली क्रिया।

२२. दोसवत्तिया क्रिया :- (द्वेष से)। दोसवत्तिया क्रिया के दो भेद :-

१. कोहवत्तिया :- द्वेष पूर्ण क्रोध से।

२. माणवत्तिया :- द्वेष पूर्ण मान से।

२३. पउगक्रिया :- (अशुभ योग के व्यापार से)। पउग क्रिया के तीन भेद :-

१. मनप्पउग :- मन के योग अशुभ प्रवर्ताने से।

२. वचनप्पउग :- वचन के योग अशुभ प्रवर्ताने से।

३. कायप्पउग :- काया के योग अशुभ प्रवर्ताने से।

२४. सामुदाणिया क्रिया :- (बहुत से लोग मिलकर एक साथ एक ही प्रकार की क्रिया करे या अच्छे बुरे दृश्य देखे अथवा आरंभजन्य कार्यों को साथ मिलकर करे)।

सामुदाणिया क्रिया के तीन भेद :-

१ सान्तर सामुदाणिया .- जो अन्तर सहित क्रिया लगे।

२. निरन्तर सामुदाणिया - जो अन्तर रहित क्रिया लगे।

३. तदुभय सामुदाणिया :- जो अन्तर सहित तथा अन्तर रहित दोनो प्रकार से क्रिया लगे।

२५. ईर्यापथिकी क्रिया :- (कषाय रहित जीवो को योग मात्र से लगने वाली क्रिया)।

मार्ग मे चलने से यह क्रिया लगती है। यह क्रिया ११ वे, १२ वे और १३ वे गुणस्थान में लगती है।

❊ क्रमश २४ क्रिया से आश्रव आता है, जिससे आत्मा मलिन (अशुद्ध) बनती है। बहुत सी क्रिया बिना प्रयोजन - प्रमाद से ही लगती है और कर्मबध होता है, अत समकिती, श्रावक और साधु को ये क्रियाएं घटाने का पुरुषार्थ करना चाहिये।

जो भव्य आत्माए पाप-क्रियाए घटायेगा, वह आत्म-विकास करते हुए कृतकृत्य (सिद्ध-बुद्ध) हो जायेगा।

सेव भंते - सेव भते

छह आरा

✳ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र के आधार से :-

अरिहंत - जिनेश्वर देव ने जगत के हित के लिए उपदेश दिया है कि, हे भव्य जीवो! इस चतुर्गति रूप घोर संसार अटवी में परिभ्रमण करते हुए अनंत काल व्यतीत हो गया है, अब अटको! इस बार तुम्हे मनुष्य गति आदि उत्तम सामग्री प्राप्त हुई है। अतः धर्म की आराधना करके मोक्ष के शाश्वत (स्थिर) सुख प्राप्त करो।

भरत और एरावत क्षेत्र की अपेक्षा काल दो प्रकार का है।

(१) अवसर्पिणी काल (२) उत्सर्पिणी काल। ये दोनो मिलाकर एक कालचक्र बनता है। इसमे से अवसर्पिणी काल का वर्णन किया जाता हैं। दस कोड़ाकोड़ी सागरोपम का एक अवसर्पिणी काल होता है। जिसमे ६ आरे होते है।

✳ पहला आरा : भोगभूमि ✳

१. पहले आरे का नाम "सुखमा-सुखमा" है। यह चार कोडाकोड़ी सागरोपम का होता है।

२. इस आरे मे मनुष्यो की आयुष्य, ऊँचाई, पसलियां और सरसाई इस प्रकार होती है :-

	लगते आरे	उतरते आरे
आयुष्य	- ३ पल्योपम का	२ पल्योपम का
ऊँचाई	- ३ कोस की	२ कोस की
पसलियां	- २५६	१२८
सरसाई	- मिश्री जैसी	शक्कर जैसी

३. इस आरे मे वज्रऋषभनाराच संहनन और समचतुरस्त्र (समचौरस) संस्थान होता है।

४ आहार की इच्छा तीन दिन के अन्तर से होती है और तुवर जितना आहार करते है।

५ पहला, दूसरा, तीसरा आरा युगलकाल कहलाता है।

६. पहले आरे मे गति एक देव की।

युगलकाल की विशेषतायें :-

१. युगलकाल मे युगल स्त्री-पुरुष का जोडा ही होता है, अन्य परिवार नही।

२. युगलो का रूप, लावण्य और सौभाग्य युक्त होता है।

३ युगलकाल मे असि-मसि-कृषि आदि कर्म और श्रावक व्रत या साधु व्रत आदि धर्म (दोनो) नही होते है।

४. १० प्रकार के कल्पवृक्ष युगलो की इच्छा पूर्ण करते है।

५ युगलकाल मे मनुष्य युगलो और तिर्यच युगलो मे (सिह, व्याघ्र, रीछ आदि मे भी) वैर नही होता है, वे सरल-भद्र परिणामी होते है।

* स्थलचर और खेचर ही युगल तिर्यच होते है।

६. युगलो के शरीर मे रोग, वृद्धावस्था या कुरूपता नही होती है और स्वभाव मे वैर-झेर, लडाई-झगडा, ईर्ष्या-द्वेष आदि भी नही होता है। किन्तु युगल सर्वांग, सुन्दर, सुरूप, युवा और सरल स्वभाव वाले होते है।

७. युगलो का ६ माह का जब आयुष्य शेष रह जाता है, तब युगल स्त्री एक युगल (पुत्र-पुत्री) को जन्म देती है और उनकी प्रतिपालना प्रथम आरे मे ४९ दिन तक, दूसरे आरे मे ६४ दिन और तीसरे आरे मे ७९ दिन तक करती है।

* यह सब पूर्व भवोपार्जित दया, दान, परोपकार आदि शुभ कार्यो का शुभ फल है।

८. युगलो का आयुष्य निरुपक्रमी होता है। छः मास का आयुष्य शेष रहे, तब युगल परभव का आयुष्य बांधते है।

९. युगल का क्षणमात्र वियोग नही होता है। एक को छीक दूसरे को उबासी आते ही दोनो एक साथ मरकर देव गति प्राप्त करते हैं।

१०. युगलो के मृत शरीर को भारण्ड पक्षी आदि क्षीरसमुद्र आदि मे डाल देते है।

★ १० प्रकार के कल्पवृक्षों का परिचय ★

कल्पवृक्ष - जो उस समय युगलो की इच्छाये पूर्ण करते है।

१. **मतंगा** - मधुर रसपूर्ण फल देनेवाले वृक्ष।

२. **भिंगा** - भाजन; रत्नजड़ित थाल, कटोरा आदि देनेवाले वृक्ष।

३. **तुडियंगा** - ४९ जाति के वाद्य यंत्र देनेवाले वृक्ष।

४. **दीप** - रत्नजडित दीपक देनेवाले वृक्ष।

५. **ज्योति** - चन्द्र, सूर्य के समान प्रकाश देनेवाले वृक्ष।

६. **चित्रंगा** - विचित्र फूलो से बने आभूषण देनेवाले वृक्ष।

७. **चितरसा** - विचित्र रसवान भोजन देनेवाले वृक्ष।

८. **मणीयंगा** - मणिजड़ित आभूषण देनेवाले वृक्ष।

९. **गृहकारा** - ४२ मंजिल के मकान देनेवाले वृक्ष।

१०. **अनियगणा** - रत्नजड़ित हल्के, नाक की हवा से उडे ऐसे पतले और उत्तम वस्त्र देनेवाले वृक्ष।

★ दूसरा आरा : भोगभूमि ★

१. प्रथम आरा पूर्ण होने पर दूसरा आरा लगता है। दूसरे आरे का नाम "सुखमा" है। यह तीन कोडाकोडी सागरोपम का है।

२. दूसरे आरे मे मनुष्यो की आयुष्य, ऊँचाई, पसलियां, सरसाई इस प्रकार होती है :-

लगते आरे	उतरते आरे
आयुष्य - २ पल्योपम	१ पल्योपम
ऊचाई -२ कोस की	१ कोस की
पसलिया - १२८	६४
सरसाई - शक्कर जैसी	गुड जैसी

३ दूसरे आरे मे वज्रऋषभनाराच संहनन और समचतुरस्त्र संस्थान होता है, परन्तु प्रथम आरे से अनंत गुणहीन होता है।

४ आहार की इच्छा दो दिन के अन्तर से होती है और बोर जितना आहार करते है।

५. दूसरे आरे मे भी युगलकाल चालू रहता है अत: युगलकाल की दस विशेषताए दूसरे आरे मे भी होती है, परन्तु पहले आरे से सब बाते अनंत गुणहीन समझनी चाहिये।

६ दूसरे आरे मे भी गति एक देव की।

★ तीसरा आरा : भोगभूमि : अन्त में कर्मभूमि ★

१ दूसरा आरा समाप्त होने पर तीसरा आरा लगता है। तीसरे आरे का नाम "सुखमा-दुखमा" है। यह दो कोडाकोडी सागरोपम का होता है।

२ तीसरे आरे मे मनुष्यो की आयुष्य, ऊंचाई, पसलिया, सरसाई इस प्रकार होती है :-

लगते आरे	उतरते आरे
आयुष्य - १ पल्योपम	करोड पूर्व का
ऊंचाई - १ कोस की	५०० धनुष की
पसलियां - ६४	३२
सरसाई - गुड जैसी	और भी घटिया

३. इस आरे मे वज्रऋषभनाराच संहनन और समचतुरस्त्र संस्थान होता है। परन्तु दूसरे आरे में अनंत गुणहीन होता हैं।

४. आहार की इच्छा एक दिन के अन्तर से होती है और आंवले जितना आहार करते है।

५. तीसरे आरे के बहुत काल तक युगलकाल चालू रहता है। अतः युगलकाल की १० विशेषताएं तीसरे आरे के बहुत काल तक रहती है। परन्तु क्रमशः घटती जाती है। दूसरे आरे से सब बाते अनंत गुणहीन समझनी चाहिये।

६. तीसरे आरे मे भी युगल धर्म तक गति एक देव की और युगलकाल समाप्त होने के बाद गति पांच समझनी चाहिये (नरक, तिर्यच, मनुष्य, देव, मोक्ष)।

तीसरे आरे के अन्त में ऋषभदेवजी का जन्म और युगलकाल का अंत :-

तीसरे आरे की समाप्ति में जब चौरासी लाख पूर्व और तीन वर्ष तथा साढ़े आठ माह शेष रहे तब सर्वार्थसिद्ध विमान से ३३ सागरोपम का आयुष्य पूर्ण करके वहां से चवकर वनिता नगरी के अन्दर नाभिराजा के यहां मरूदेवी माता की कोख मे श्री ऋषभदेवजी उत्पन्न हुए। माता ने प्रथम स्वप्न में 'वृषभ' देखा, अतः पुत्र का नाम 'ऋषभ' रखा गया। ऋषभदेव ने युगलिक धर्म समाप्त होते देखकर तथा कल्पवृक्षो मे निष्फलता और बादर अग्नि की शुरुआत होते देखकर जीवन निर्वाह के लिए असि-मसि-कृषि का कर्म सिखाया तथा पुरुषो को ७२ कला व स्त्रियो को ६४ कला का शिक्षण दिया।

श्री ऋषभदेवजी ने बीस लाख पूर्व तक कुमार अवस्था मे और ६३ लाख पूर्व तक राज्य शासक अवस्था मे व्यतीत करके अपने ज्येष्ठ पुत्र भरत को राज्यभार सौंप कर जगत के जीवो को धर्मकला (आत्मकल्याण

की कला) सिखाने के लिए ४ हजार पुरुषो के साथ दीक्षा ग्रहण की। संयम लेने के १००० वर्ष बाद ऋषभदेवजी को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। धर्मकला सिखाकर छद्मस्त और केवल अवस्था मे कुल मिलाकर एक लाख पूर्व का संयम पालन करके १० हजार साधुओ के साथ "अष्टापद" पर्वत पर पद्म आसन से निर्वाण पद को प्राप्त हुए।

भगवन्त के चार कल्याणक उत्तराषाढा नक्षत्र मे हुए :-

१ उत्तराषाढा नक्षत्र मे सर्वार्थसिद्ध से चवकर मरूदेवी माता की कोख मे पधारे।

२. उत्तराषाढा नक्षत्र मे आपका जन्म हुआ।

(उत्तराषाढा नक्षत्र मे राज्यशासन पर विराजमान हुए)।

३ उत्तराषाढा नक्षत्र मे दीक्षा ग्रहण की।

४ उत्तराषाढा नक्षत्र मे केवलज्ञान प्राप्त हुआ।

अभिजीत नक्षत्र मे भ. ऋषभदेव मोक्ष पधारे। युगलधर्म समाप्त होने पर धर्म और कर्म दोनो की प्रवृत्ति होने से गति पांच जानना।

★ चौथा आरा : कर्मभूमि ★

१ तीसरा आरा समाप्त होने पर चौथा आरा लगता है। चौथे आरे का नाम "दु खमा-सुखमा" है।

यह ४२ हजार वर्ष कम एक कोडा-कोडी सागरोपम का होता है।

२. इस आरे मे मनुष्यो की आयुष्य, ऊंचाई, पसलिया और सरसाई इस प्रकार होती है :-

	लगते आरे	उतरते आरे
आयुष्य	क्रोडपूर्व	१०० वर्ष झाझेरी
ऊंचाई	५०० धनुष की	७ हाथ की
पसलियां	३२	१६

सरसाई - अच्छी मिट्टी जैसी   घटिया मिट्टी जैसी

३. इस चौथे आरे मे छह सहनन और छह संस्थान होते है।

४. आहार की इच्छा प्रतिदिन होती है और कवल जितना आहार करते है।

५. चौथे आरे मे कर्मभूमि ही होती है।

६. इस आरे मे पांचो गति होती है।

''चौथे आरे की विशेषता और भगवान महावीर का परिचय''

चौथे आरे मे अजितनाथ आदि २३ तीर्थंकर, भरत चक्रवर्ती सिवाय ११ चक्रवर्ती, ९ बलदेव, ९ वासुदेव, ९ प्रतिवासुदेव आदि ६१ श्लाघनीयपुरुष भव्य (अन्त मे मोक्षगामी) आत्माएं होती हैं।

अनुक्रम से चौथा आरा पूर्ण होते, जब ७५ वर्ष और साढ़े आठ मास शेष रहे तब १० वे प्राणत देवलोक से २० सागरोपम का आयुष्य पूर्ण करके वहॉ से चवकर महावीर स्वामी कुण्डलपुर नगर मे ऋषभदत्त ब्राह्मण के घर देवानंदा ब्राह्मणी की कोख मे उत्पन्न हुए। वहां आप ८२।। रात्रि रहे। ८३ वी रात्रि मे शकेन्द्र का आसन कम्पित हुआ और उन्होंने हरिणगमेषी देव को गर्भ साहरण की आज्ञा दी। तदनुसार देवानंदा ब्राह्मणी के गर्भ से भ. महावीर को त्रिशला महारानी के गर्भ मे रखा और त्रिशला महारानी के गर्भ मे रही कन्या को देवानंदा के गर्भ मे रखा गया। इस प्रकार कुंडलपुर के महाराजा सिद्धार्थ के घर त्रिशला के गर्भ से समय पूर्ण होने पर ''चैत्र शुक्ला तेरस'' को २४ वे तीर्थकर भ महावीर स्वामी का जन्म हुआ। जब यौवनावस्था मे आये तब राजकुमारी ''यशोदा'' के साथ उनका विवाह हुआ। कुछ समय बाद यशोदा ने एक पुत्री को जन्म दिया। उसका नाम ''प्रियदर्शना'' रखा गया।

मात-पिता के स्वर्गवासी होने पर भ महावीर स्वामी ने ३० वर्ष की युवावस्था मे राज्य, सुख, वैभव का त्याग करके अकेले ही

स्वयदीक्षित बनकर १२ वर्ष ६ मास और १४ दिन तक घोर परिषह-उपसर्ग को सहन करके तथा दीर्घ तपस्या करके वैशाख शुक्ला १० को केवलज्ञान, केवलदर्शन प्राप्त किया और कुछ कम ३० वर्ष तक केवलज्ञान द्वारा भव्य जीवो पर अनंतानत उपकार करके कुल ७२ वर्ष की आयु मे कार्तिक वदी अमावस्या की पिछली रात्रि मे हस्तिपालराजा की पावापुरी नगरी मे चौथे आरे के तीन वर्ष और साढे आठ मास शेष रहे तब भ महावीर स्वामी मोक्ष पधारे। भ. महावीर स्वामी के ५ कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे हुए .-

१. उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे १० वे देवलोक से चवन हुआ।

२ उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे गर्भ साहरण।

३ उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे जन्म।

४. उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे दीक्षा।

५ उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे केवलज्ञान।

स्वाति नक्षत्र मे भ महावीर मोक्ष पधारे, उसी दिन गौतम स्वामी को केवलज्ञान हुआ। वे १२ वर्ष तक केवलपर्याय पालकर मोक्ष पधारे। उसी दिन सुधर्मा स्वामी को केवलज्ञान हुआ। वे भी ८ वर्ष तक केवलपर्याय पालकर मोक्ष पधारे। उसी दिन जबू स्वामी को केवलज्ञान हुआ। वे भी ४४ वर्ष तक केवल पर्याय पालकर मोक्ष पधारे।

इस प्रकार महावीर स्वामी के निर्वाण के बाद ६४ वर्ष तक केवलज्ञान रहा। चौथे आरे मे जन्मे हुए को पाचवे आरे मे मोक्ष मिल सकता है, किन्तु पाचवे आरे मे जन्मे हुए को पांचवे आरे मे मोक्ष नही मिल सकता।

जम्बू स्वामी के मोक्ष पधारने के बाद १० बोलो का विच्छेद हुआ :-

(१) केवलज्ञान (२) मन पर्यवज्ञान (३) परमअवधिज्ञान (४) यथारव्यात चारित्र (५) सूक्ष्मसपराय चारित्र (६) परिहारविशुद्ध चारित्र (७) पुलाकलब्धि (८) उपशम और क्षपक श्रेणी (९) आहारक शरीर (१०) जिनकल्पी मुनि।

★ पॉचवा आरा : कर्मभूमि ★

१ चौथा आरा पूर्ण होने पर पॉचवा आरा लगता है। पांचवे अ का नाम **"दुखमा"** है। यह २१ हजार वर्ष का होता है।

२. इस आरे मे मनुष्यो की आयुष्य, ऊंचाई, पसलियां, सरसाई इ प्रकार होती है :-

	लगते आरे	उतरते आरे
आयुष्य	१०० वर्ष झाझेरी	२० वर्ष
ऊंचाई	७ हाथ की	२ हाथ की
पसलियां	१६	८
सरसाई	घटिया मिट्टी जैसी	कुम्हार के निमाडे की राख जैसी

३. लगते पांचवे आरे मे ६ संहनन और ६ संस्थान तथा उतर आरे मे सेवार्तक संहनन और हुण्डक संस्थान।

४. आहार की इच्छा अनियमित होती है।

५. पांचवे आरे के प्रारंभ मे गति पांच होती है और जम्बुस्वामी वे निर्वाण के बाद गति चार होती है।

पांचवें आरे के लक्षण और पांचवें आरे का अन्तिम समय

१. शहर, नगर ग्राम जैसे होगे।

२. ग्राम श्मशान जैसे होगे।

३. भले कुल के मनुष्य दासीपना करेगे।

४. प्रधान, लालची होगे।

५. राजा-यम के समान कठोर होगे।

६. भले घर की स्त्रियां लज्जा रहित होगी।

७. भले घर की स्त्रियां वेश्या के समान कर्म करेगी।

८. पुत्र, पिता को छोडकर चले जायेगे।

९ शिष्य, गुरु के अवगुण बोलेगा।

१०. दुर्जन लोग सुखी होगे।

११ सज्जन लोग दुखी होगे।

१२ दुर्भिक्ष बहुत पडेगे।

१३. सर्प, बिच्छू, डांस, मच्छर आदि क्षुद्र – उपद्रवकारी जीवो की उत्पत्ति बहुत होगी।

१४ ब्राह्मण धन के लोभी होगे।

१५. हिसा धर्म का उपदेश बहुत होगा।

१६. एक धर्म के अनेक भेद होगे।

१७. मिथ्यात्वी देवो की पूजा बहुत होगी।

१८. मिथ्यात्वी लोगो की सख्या बढेगी।

१९. मनुष्य को देवदर्शन दुर्लभ होगा।

२० विद्याधरो की विद्या का प्रभाव कम होगा।

२१ दुध, दही, घी, तेल, शक्कर आदि मे शक्ति कम होगी।

२२ हाथी, घोडे, बैल आदि का आयुष्य कम होगा।

२३ साधु-साध्वियो को मासकल्प और चातुर्मास करने योग्य क्षेत्र कम होगे।

२४ साधुओ की १२ भिक्षु प्रतिमा का विच्छेद होगा।

२५ गुरु शिष्यो को पढावेगे नही या पढ़ाने मे भेदभाव करेगे।

२६. शिष्य क्लेशकारी होगे।

२७ अधर्मी, क्लेशी, कदाग्रही और धूर्त लोग अधिक होगे।

२८. आचार्यो की अलग-अलग समाचारी होगी।

२९. सरल, भद्र, न्यायिक तथा प्रामाणिक पुरुष कम होगे।

३०. म्लेच्छ राजा अधिक होगे।

३१. हिन्दु राजा अल्प ऋद्धिवाले होगे।

३२. अच्छे भले कुल के राजा नीच कार्य करेगे।

★ इस आरे मे क्रमशः उत्तम धातु का नाश होगा। मात्र लोहे की धातु रहेगी। चमड़े की मोहरे चलेगी। जिनके पास ये अधिक होगी वे श्रीमन्त कहलायेगे। इस आरे मे मनुष्यो को उपवास मासखमण जैसा लगेगा।

★ इस आरे मे क्रमशः ज्ञान का विच्छेद होता जायेगा। अन्त मे मात्र दशवैकालिक के चार अध्ययन रहेगे।

☆ अन्त मे चार जीव एकाभवतारी होगे :-

१. दुपसह नामक आचार्य

२. फाल्गुनी नामक साध्वी।

३. जिनदास श्रावक

४ नागिला श्राविका (कुछेक नागश्री भी कहते है)।

भ. महावीर स्वामी का शासन २१ हजार वर्ष तक चलेगा।

पांचवे आरे का अन्तिम समय :-

आषाढ शुक्ला पूर्णिमा को शक्रेन्द्र का आसन चलायमान होगा। तब शक्रेन्द्र महाराज उपयोग लगाकर मालूम करेगे कि आज पाचवा आरा समाप्त होगा और कल छट्ठा आरा लगेगा। यह जानकर शक्रेन्द्र महाराज भरतक्षेत्र मे आकर उन चारो जीवो को कहेगे कि कल छट्ठा आरा लगेगा। इसलिए आप चारो आलोचना व प्रतिक्रमण करके शुद्ध बन जाओ। ऐसा सुनकर चारो जीव सभी जीवो से क्षमा मांगकर, नि:शल्य होकर संथारा करेगे। पश्चात् संवर्तक, महासंवर्तक नामक आंधी चलेगी, जिससे पर्वत, महल, कोट, कुएँ, वावडिया आदि सब स्थान नष्ट हो जावेगे। मात्र पांच स्थान वचे रहेगे :-

१ वैताढ्य पर्वत २ गंगा नदी ३. सिधु नदी ४ ऋषभकुट ५. लवण समुद्र की खाडी

वे चारो जीव समाधिमरण से मरकर प्रथम देवलोक मे जायेगे। पश्चात्

☆ चार बोल का विच्छेद होगा -

१ प्रथम प्रहर मे जैनधर्म। २ दूसरे प्रहर मे मिथ्यात्वियो का धर्म। ३. तीसरे प्रहर मे राजनीति। ४ चौथे प्रहर मे बादर अग्नि।

★ छट्ठा आरा ★

१ पांचवा आरा पूर्ण होने पर छट्ठा आरा लगता है। छट्ठे आरे का नाम "दु खमा-दु खमा" है। यह २१ हजार वर्ष का होता है।

२ इस आरे मे मनुष्यो की आयुष्य, ऊंचाई, पसलियां व सरसाई इस प्रकार है -

	लगते आरे	उतरते आरे
आयुष्य	- २० वर्ष	१६ वर्ष
ऊचाई	- २ हाथ की	१ हाथ की
पसलियां	- ८	४
सरसाई	- बढिया राख	घटिया राख

३ लगते छट्ठे आरे मे एक सेवार्त संहनन और हुण्डक संस्थान होगा, उतरते आरे मे अनत गुणहीन सेवार्त सहनन और हुण्डक संस्थान रहेगा।

४ भयंकर भूख लगेगी, परन्तु पर्याप्त आहार नही मिलेगा। पचम आरे के अन्तिम समय विनाश पाते हुए मनुष्यो और पशुओ मे से कुछ बीज रूप जीवो को उठा-उठाकर भरतक्षेत्र के अधिष्ठित देव गंगा और सिधु नदी के किनारे बने हुए ७२ बिलो मे ले जाकर रख देगे। वे बिल तीन-तीन मजिल वाले होगे।

गंगा, सिधु नदी का साढे ६२ योजन का पाट है। यह सब सूख करके रथ के पहिये जितना चौडा पाट और रथ की धुरी डूबे, उतना गहरा जल रह जायेगा। जिसमे मच्छ, कच्छ आदि जीव जंतु विशेष होगे।

७२ बिलो मे रहनेवाले मनुष्य प्रातः और संध्या के समय बिलो के बाहर निकलेगे और गंगा तथा सिधु नदी के मच्छ-कच्छ आदि जीवो को पकड़कर नदी के किनारे रेती मे दबा देगे। वे दिन मे सूर्य की गर्मी से और रात मे तीव्र ठण्डक से सिक (भुना) जायेगे। उन्ही का आहार मनुष्य करेगे और उन जलचर जीवो की चमडी और हड्डियो को चाटकर तिर्यच अपना निर्वाह करेगे। मनुष्य की खोपडी मे जल पीयेगे।

छ वर्ष की स्त्री गर्भ धारण करेगी व कुत्ती के समान परिवार के साथ महाक्लेशमय वातावरण मे रहेगी। मनुष्यो मे परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, क्लेश अत्यन्त बढेगा। तीव्र कुरुप और भयंकर रोग से ग्रस्त जीवन होगे। दुःख से दिन पूर्ण करेगे।

* जो जीव दान-पुण्य, व्रत-पच्चक्खाण रहित होगे वे इस आरे मे आकर उत्पन्न होगे।

सेव भते - सेव भते

३४ अस्वाध्याय

(मूल पाठ के लिए)

ठाणांग सूत्र में :-

★ आकाश की १० अस्वाध्याय

१ बडा तारा आकाश से गिरे (१ प्रहर)।

२ चारो ही दिशा जब तक लाल रहे।

३ अकाल मे गर्जना होवे (२ प्रहर)।

४ अकाल मे बिजली चमके (१ प्रहर)।

५ अकाल मे कडाका होवे (अहोरात्रि)।

६ शुक्ल पक्ष की १, २, ३ की रात (प्रहर रात्रि तक)।

७ यक्ष का चिन्ह होवे।

८ ओले गिरे (चौमासे मे)।

९ धूंधल गिरे (शियाले मे)।

१०. आकाश धूल से भर जाए (उण्हाले मे)।

इनसे अस्वाध्याय होती है।

★ औदारिक शरीर की १० अस्वाध्याय

१ तत्काल की गीली हड्डी गिरी हो। २ मास पडा हो। ३ खून गिरा हो।

नोट :- ये तीनो तिर्यच पंचेन्द्रिय के हो तो ६० हाथ के भीतर और मनुष्य के हो तो १०० हाथ के भीतर अस्वाध्याय का कारण है। इनका काल ३ प्रहर का है, परन्तु हत्या करने से मरे हो तो एक दिन-रात की अस्वाध्याय है।

४ विष्टा आदि दिखाई देती हो या दुर्गन्ध आती हो।

५. मुर्दा (लाश) जलता हो।

६ चन्द्र ग्रहण हो तो (जघन्य आठ,उत्कृष्ट बारह प्रहर तक)।

७. सूर्यग्रहण हो तो (जघन्य आठ, उत्कृष्ट सोलह प्रहर तक)।

८. बडा राजा मरे तव (नया राजा न बने तब तक)।

९ निकट मे संग्राम चले (जब तक युद्ध चले)।

१०. पंचेन्द्रिय का प्राण रहित शरीर पडा हो।

इनसे अस्वाध्याय होती है।

★ काल की १४ अस्वाध्याय

१. चैत्र सुदी पूनम   २. वैशाख वदी एकम।

३. आषाढ़ सुदी पूनम   ४. श्रावण वदी एकम।

५. भादवा सुदी पुनम   ६. आश्विन वदी एकम।

७. आश्विन सुदी पूनम   ८. कार्तिक वदी एकम।

९. कार्तिक सुदी पूनम   १०. मिगसर वदी एकम।

११. प्रातःकाल १२. संध्याकाल १३ मध्यान्हकाल।

१४. मध्यरात्रि (अंतिम चार सधिकाल मे १-१ घंटा)।

नोट :- अ - कालिक सूत्र की दिन व रात के प्रथम तथा अंतिम प्रहर (पोरसी) मे स्वाध्याय कर सकते है।

ब - आर्द्रा नक्षत्र से स्वाति नक्षत्र तक गर्जना, विजली की अस्वाध्याय नही होती है।

स - होली प्रगट हो तब तथा धूलेटी के दिन भी अस्वाध्याय काल समझना।

ड - स्वाध्याय खुले मुंह नही करना चाहिए।

आहार के १०६ दोष

साधु, साध्वी १०६ दोष टालकर गोचरी करे। ये १०६ दोष भिन्न-भिन्न सूत्रो के आधार से कहे है।

आचारांगसूत्र, सूयगडांगसूत्र तथा निशीथसूत्र के आधार से ४२ दोष :-

उद्गम के १६ दोष :- जो गृहस्थ की अज्ञानता से या मोह से साधु को लगते है।

१. **आधाकर्मी :-** साधु के लिए आरंभ करके बनाया हुआ आहार आदि ले तो।

२. **उद्देशिक :-** साधु के लिए आरंभ करके बनाया हुआ आहार अन्य साधु ले तो।

३. **पूतिकर्म :-** निर्दोष आहार मे आधाकर्मी आहार का अंश मात्र मिल जाये वह ले तो।

४. **मिश्रजात :-** कुछ गृहस्थ के लिए, कुछ साधु के लिए बनाया आहार ले तो।

५. **ठवणा :-** साधु के लिए विशेष रूप से रखा हुआ आहार ले तो।

६. **पाहुडियाए :-** साधु के लिए मेहमानो का भोजन, समय या तिथि बदलकर बनाया हुआ आहार ले तो।

७. **पाओर :-** जहा अंधेरा हो वहां खिड़की या उजाला करके देवे वह ले तो।

८. **क्रीत :-** साधु के लिए खरीदकर लाया हुआ ले तो।

९. **पामिच्चे :-** साधु के लिए उधार लाया हुआ ले तो।

१०. परियडे :- साधु के लिए अपनी वस्तु बदले मे देकर लाया हुआ ले तो।

११. अभिहडे :- साधु के लिए अन्य स्थान से सामने लाया हुआ ले तो।

१२. भिन्ने :- साधु के लिए सील, पेक, ताला आदि खोलकर दे वह ले तो।

१३. मालोहडे :- मंजिल, निस्सरणी आदि पर चढ़कर कठिनाई से उतारकर दिया हुआ ले तो।

१४. अछिज्जे :- निर्बल से, बालक से दबाव डालकर या बलपूर्वक छीनकर दिया हुआ ले तो।

१५. अणिसिट्टे :- दोनो भागीदारो की इच्छा (सहमति) बिना दिया हुआ ले तो।

१६. अज्झोयरे :- भोजन बनाते समय साधुओ के आने का जानकर नया बढ़ाकर बनाया हुआ ले तो।

उत्पाद के १६ दोष :- जो साधु स्वय रस लोलुपता आदि से लगाता है।

१. धाई :- गृहस्थो के बच्चो को खेलाकर लिया हुआ।

२. दूई :- दूतीपना (समाचार आदि लाना अथवा ले जाना) करके लिया हुआ।

३. निमित्त :- भूत, भविष्य, वर्तमान आदि निमित्त बताकर लिया हुआ।

४. आजीव :- जाति, कुल आदि का परिचय (गौरव) बताकर लिया हुआ।

५. वणीमग :- भिखारी की तरह दीनता बताकर लिया हुआ।

६. तिगिच्छा :- औषध, भेषज आदि बताकर, रोग आदि का निदान बताकर लिया हुआ।

७. कोहे :- क्रोध करके लिया हुआ।

८. माणे :- अभिमान करके लिया हुआ।

९. माया :- कपट करके लिया हुआ।

१०. लोभ :- लोभ (लोलुपता) करके लिया हुआ।

११. पूर्व पश्चात संस्तुतः :- दान के पहले अथवा दान के बाद दाता की स्तुति या प्रशंसा करके लिया हुआ।

१२. विद्या :- गृहस्थो को लौकिक विद्या पढाकर या बताकर लिया हुआ।

१३. मंत्र :- जंत्र, मत्र, तत्र आदि बताकर लिया हुआ।

१४. चूर्ण :- रसायन आदि सिखाकर लिया हुआ।

१५. योग :- लेप, वशीकरण आदि बताकर (सिखाकर) लिया हुआ।

१६. मूलकर्म :- गर्भपात या गर्भधारण आदि का उपाय बताकर लिया हुआ।

एषणा के १० दोष -- साधु और दाता दोनो के प्रमाद से लगते है।

१. संकिए :- साधु और गृहस्थ दोनो को या किसी एक को भी आहार आदि मे शंका होने पर भी लिया हुआ।

२. मक्खिए :- दाता के हाथ की रेखा अथवा बाल सचित पानी से भीगे हुए होने पर भी लिया हुआ।

३. निक्खित्ते :- सचित्त पर रखा हुआ आहार आदि ले तो।

४. पिहिए :- सचित्त से ढका हुआ आहार आदि ले तो।

५. मिसिए :- सचित्त और अचित्त दोनो मिला हुआ ले तो।

६. अपरिणिए :- पूरा अचित नही बना है ऐसा ले तो।

७. साहरिए :- एक वर्तन से दूसरे वर्तन मे निकालकर दे वह ले तो।

८. दायगो :- अंगोपाग से हीन या उठने-बैठने मे कठिनाई होती है या हाथ-पैर कांपते हो ऐसे दाता से ले तो।

९. लित्ते :- तुरंत लीपे या सचित्त पानी से धोये हुवे पर चलकर दिया हुआ ले तो।

१०. छंडिए :- देते समय वस्तु नीचे गिरती या टपकती हो ऐसा ले तो।

आवश्यक सूत्र में बताये ५ दोष

१. उग्घाड कवाड उग्घाडणाए :- गृहस्थो के दरवाजे (विना आज्ञा) खोलकर ले तो।

२. बलिपाहुडियाए :- देवी-देवता के नैवेद्य के लिए, बलिदान के लिए बनी वस्तु ले तो।

३. ठवणा पाहुडियाए :- गाय, कुत्ते आदि के लिए रखी रोटी आदि ले तो।

४. अदिट्ठहडाए :- बिना देखी हुई वस्तु ले तो।

५. परिट्ठावणियाए :- प्रथम नीरस आहार पर्याप्त आया हुआ हो फिर भी सरस आहार का निमंत्रण प्राप्त होने पर या संयोग होने पर लोलुपता से पूर्व का आहार परठने की भावना से सरस आहार ले तो।

उत्तराध्ययन सूत्र में बताये २ दोष

१. सन्नाइपिण्डं जेमेइ :- अन्य कुलो मे से गोंचरी नहीं करते हुए अपने स्वजन सम्बन्धियो के यहां से ही गोंचरी करे।

२. कारणम्मि समुट्ठिए :- विना कारण आहार ले अथवा विना कारण आहार त्यागे।

आहार लेने के ६ कारण	आहार छोडने के ६ कारण
१ भूख सहन नही होने से।	१ रोग आदि हो जाने पर।
२ आचार्य आदि की वैयावच्च के लिए	२. उपसर्ग आ जाने पर।
३. ईर्यासमिति के शोधन के लिए।	३. ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए।
४ संयम यात्रा के निर्वाह के लिए।	४. जीवो की दया के लिए।
५. प्राणो की रक्षा के लिए।	५ तप करने की इच्छा होने पर।
६ धर्मध्यान मे अन्तराय न हो।	६ संथारा की इच्छा होने पर।

दशवैकालिक सूत्र में बताये २३ दोष

१. **नीयं दुवारं** :- जहां दरवाजा नीचा हो और झुककर जाना पडे वहां गोचरी करे तो दोष।

२. **तमसंकोट्ठगं** :- अंधरे कमरे मे जाकर गौचरी करे तो दोष।

३. **एलगं** :- गृहस्थ के द्वार पर बैठे बकरे-बकरी को उलांघकर जाकर लेवे तो दोष।

४. **दारगं** :- गृहस्थ के द्वार पर बैठे बालक-बालिका को उलांघकर जाकर लेवे तो दोष।

५. **साणं** :- गृहस्थ के द्वार पर बैठे कुत्ते-कुत्ती आदि को उलांघकर जाकर लेवे तो दोष।

६. **वच्छगं** :- गृहस्थ के द्वार पर बैठे गाय के बछडे आदि को उलाघकर जाकर लेवे तो दोष।

७. **विउहित्ताणं** :- उपर कहे हुए या अन्य किसी भी प्राणी को हटाकर जाकर लेवे तो दोष।

८. **सचित्तं घट्टियाणिय** :- साधु को आया जानकर साधु के लिए सचित्त आदि सघट्टे की वस्तुओ को आगे-पीछे हटाकर देवे और वह लेवे तो दोष।

९. दाणट्ठा :- दान के लिए निकाला हुआ या बनाया हुआ लेवे तो दोष।

१०. पुण्णट्ठा :- पुण्य के लिए निकाला हुआ या बनाया हुआ लेवे तो दोष।

११. वणिमट्ठा :- रंक, भिखारी के लिए निकाला हुआ या बनाया हुआ लेवे तो दोष।

१२. समणट्ठा :- बाबा, जोगी के लिए बनाया हुआ लेवे तो दोष।

१३. रायपिण्ड :- राजा आदि का विशिष्ट, वलिष्ट (कामोत्तेजक) आहार ले तो दोष।

१४. सिज्जायर पिण्ड :- मकान (शय्या के आज्ञा) दाता के वहां से ले तो।

१५. नियागं :- नित्य एक घर से गौचरी करे या निमत्रण स्वीकार कर जाकर लेवे तो दोष।

१६. सचित्तं घट्टियाणिय :- सचित्त नमक आदि के संघट्टेवाली वस्तु ले तो दोष।

१७. किमिच्छए :- जो मांगे वह मिले ऐसी दानशाला आदि से आहार आदि ले तो दोष।

१८. बहुउज्झिए धम्मियं :- जो खाने मे कम आवे और अधिक परठनी पड़े ऐसी तुच्छ वस्तु ले तो दोष।

१९. पच्छाकम्म पूरेकम्म :- वहराने के पूर्व या पश्चात दाता सचित्त पानी से हाथ आदि धोकर देवे वह ले तो दोष।

२०. पडिकुट्ठं कुलं :- निषिद्ध कुल, मद्य, मांस, अभक्ष्य भोजी आदि घरो से ले तो दोष।

२१. अचियत्तं कुलं :- अप्रतीतकारी घर, जहा के स्त्री या पुरुष दुराचारी हो, ऐसे घरो से ले तो दोष।

२२. मामगं :- जिसने अपने घर आने का मना कर दिया है, ऐसे घरो मे जाकर आहार ले तो दोष।

२३. मज्जगं रसं :- मदिरा आदि लेवे तो महादोष है।

श्री आचारांग सूत्र में बताये ८ दोष

१ मेहमानो के निमित्त बनाया विशिष्ट भोजन उनके भोजन करने से पहले ले तो दोष।

२ त्रस जीवो का मास जो सर्वथा निषिद्ध है, वह ले तो दोष।

३ पुण्यार्थ इकट्ठे किये धन्न या धान्य से निर्मित आहार आदि ले तो दोष।

४. जीमनवार (जहां बहुत लोगो का भोजन) होता हो वहा से ले तो दोष।

५ जिस घर बहुत भिखारी इकट्ठे हुए हो वहाँ से ले तो दोष।

६ फूक मारकर देता हुआ आहार आदि ले तो दोष।

७ भोयरा, तलघर आदि से निकालकर दे वह ले तो दोष।

८ पंखे आदि से ठण्डा करके दिया हुआ ले तो दोष।

भगवती सूत्र में बताये १२ दोष

१. संयोग :- आये आहार को अधिक स्वादिष्ट और मनोज्ञ बनाने के लिए अन्य वस्तु लेने के लिए जावे या मिलावे तो दोष।

२. इंगाल (राग) **:-** मनोज्ञ आहार की प्रशंसा करते हुए खावे तो दोष।

३. धूम (द्वेष) **:-** अमनोज्ञ आहार की निदा करते हुए खावे तो दोष।

४. प्रमाण :- लोलुपतावश ठूंस-ठूसकर खावे तो दोष।

५. कालातिक्रान्त :- प्रथम प्रहर मे लाया हुआ आहार आदि चौथे प्रहर मे भोगवे (वापरे) तो दोष।

६. मार्गातिक्रान्त :- दो कोस से अधिक दूर आहार आदि ले जाकर करे तो दोष।

७. क्षेत्रातिक्रान्त :- सूर्योदय से पहले या सूर्यास्त के बाद आहार करे तो दोष।

८. अडवीभत्तं :- जंगल मे भूले भटके लोगो के लिए बनाया हुआ आहार, पानी ले तो दोष।

९. दुब्भिक्खभत्तं :- दुष्काल (दुर्भिक्ष) मे मानव राहत के लिए बनाया हुआ आहार आदि ले तो दोष।

१०. गिलाणभत्तं :- ग्लान (थके हुए), रोगी आदि के लिए बनाया हुआ आहार आदि ले तो दोष।

११. अणाहभत्तं :- लावारिश, अनाथो के लिए बनाया आहार आदि ले तो दोष।

१२. गृहस्थ के निमंत्रण से उसके घर जाकर आहार ले तो दोष।

प्रश्नव्याकरण सूत्र में बताये ५ दोष

१. मुनि के लिए आहार का रूपान्तर करके जैसे चूरमा से लड्डू बनाकर दिया हुआ ले तो दोष।

२. मुनि के लिए आहार की पर्याय पलटकर जैसे - दही की छाछ या रायता बनाकर दिया हुआ ले तो दोष।

३. गृहस्थ के यहाँ से साधु स्वयं अपने हाथ से आहार ले तो दोष।

४. मुनि के लिए भण्डारिए आदि से लाकर देवे वह ले तो दोष।

५. मधुरवचन बोलकर, खुशामद करके आहार की याचना करे तो दोष।

निशीथ सूत्र में बताये ६ दोष

१ गृहस्थ के घर जाकर "इस बर्तन मे क्या है?" इस प्रकार पूछकर ले तो दोष।

२ अनाथ, मजदूर आदि के पास से दीनतापूर्वक याचना करके ले तो दोष।

३ अन्यतीर्थिक (बाबा, जोगी, सन्यासी) की भिक्षा मे से याचना करके ले तो दोष।

४ पासत्था (शिथिलाचारी) के पास से याचना करके ले तो दोष।

५. जैन साधुओ से घृणा करनेवाले कुलो से ले तो दोष।

६. मकान की आज्ञा देनेवाले को साथ लेकर, उसकी दलाली का ले तो दोष।

दशाश्रुतस्कंध सूत्र में बताये २ दोष

१. बालक के लिए बनाया हुआ ले तो दोष।

२. गर्भवती के लिए बनाया हुआ, उनके खाने के पहले ले तो दोष।

बृहतकल्प सूत्र में बताया १ दोष

१. परियासियं भोयणजायं :- चार प्रकार का आहार, रात्रि मे बासी रखकर दूसरे दिन भोगवे तो दोष।

(४२ + ५ + २ + २३ + ८ + १२ + ५ + ६ + २ + १ = १०६)

इनमें ५ दोष माण्डला (भोजन करते समय) के और १०१ दोष गोचरी के है।

सेव भते - सेव भते

गतागत

★ जीव के ५६३ भेद ★

१. नारकी के १४ भेद :- धम्मा, वंशा, शीला, अंजना, रिष्टा, मघा, माघवई इन सात के अपर्याप्त और पर्याप्त।

२. तिर्यच के ४८ भेद :- पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय ये ४ सूक्ष्म और ४ बादर इन ८ के अपर्याप्त और ८ पर्याप्त = १६ भेद।

वनस्पतिकाय के ६ भेद :- सूक्ष्म, प्रत्येक, साधारण इन तीन के अपर्याप्त और पर्याप्त ६ भेद।

तीन विकलेन्द्रिय के ६ भेद :- बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय इन तीन के अपर्याप्त और पर्याप्त ६ भेद।

असन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय के १० भेद :- जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपुर, भुजपुर इन पॉच के अपर्याप्त और पर्याप्त = १० भेद।

सन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय के १० भेद :- जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपुर, भुजपुर इन पॉच के अपर्याप्त और पर्याप्त = १० भेद। २२ (एके) + ६ (विकले) + २० (ति. पंचे) = ४८ भेद।

३. मनुष्य के ३०३ भेद :- १५ कर्मभूमि, ३० अकर्मभूमि, ५६ अन्तरद्वीप ये १०१ सन्नी मनुष्य के अपर्याप्त और पर्याप्त = २०२ तथा १०१ समुर्च्छिम मनुष्य के अपर्याप्त इस प्रकार २०२ + १०१ = ३०३।

४. देवता के १९८ भेद :- १० भवनपति, १५ परमाधर्मी, १६ वाणव्यंतर, १० जृंभक = ५१

१० ज्योतिषी, १२ देवलोक, ३ किल्विषी = २५

९ लोकान्तिक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान = २३

५१ + २५ + २३ = ९९ जाति के देव के अपर्याप्त और पर्याप्त = १९८ भेद।

आगत :- ५६३ मे से जिस-जिस बोल के आकर उत्पन्न होवे वह।

गत :- ५६३ बोल मे (मृत्यु बाद) जिस-जिस मे जावे वह।

१. पहली नरक की आगत :- २५ की - १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच, ५ असन्नी तिर्यच। गत - ४० की - १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच इन २० का अपर्याप्ता व पर्याप्ता।

२. दूसरी नरक की आगत :- २० की - १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच। गत - ४० की उपरवत् ।

३. तीसरी नरक की आगत :- १९ की - उपर मे से भुजपुर छोडकर। गत - ४० की उपरवत् ।

४. चौथी नरक की आगत :- १८ की - उपर मे से खेचर छोडकर। गत - ४० की उपरवत् ।

५. पांचवी नरक की आगत :- १७ की - उपर मे से स्थलचर छोडकर। गत - ४० की उपरवत् ।

६. छट्ठी नरक की आगत :- १६ की - उपर मे से उरपुर को छोडकर। गत - ४० की उपरवत् ।

७. सातवीं नरक की आगत :- १६ की - १५ कर्मभूमि व जलचर (इसमे स्त्री मरकर नही आती है)। गत - १० की - ५ सन्नी तिर्यच के अपर्याप्ता व पर्याप्ता।

८. २५ भवनपति, २६ वाणव्यन्तर इन ५१ जाति के देवता की आगत :- १११ की - १०१ सन्नी मनुष्य, ५ सन्नी तिर्यच, ५ असन्नी तिर्यच। गत - ४६ की - १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच, बादर पृथ्वी, पानी, वनस्पति इन २३ के अपर्याप्त व पर्याप्त।

९. ज्योतिषी और पहले देवलोक की आगत :- ५० की - १५ कर्मभूमि, ३० अकर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच के पर्याप्त। गत - ४६ की ऊपरवत्।

१०. दूसरे देवलोक की आगत :- ४० की - १५ कर्मभूमि, ३० अकर्मभूमि मे से ५ हेमवय, ५ हिरणवय छोडकर, ५ सन्नी तिर्यच के पर्याप्त। गत ४६ की ऊपरवत् ।

११. पहली किल्विषी की आगत :- ३० की - १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच, ५ देवकुरु व ५ उत्तरकुरु। गत - ४६ की ऊपरवत्।

१२. तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक, नौ लोकांतिक और दूसरी-तीसरी किल्विषी इन १७ जाति के देवता की आगतः- २० की - १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच के अपर्याप्त व पर्याप्त। गत - ४० की।

१३. नौवें, दसवें, ग्यारहवें, बारहवें देवलोक, नौ ग्रैवेयक और पांच अनुत्तर विमान इन १८ जाति के देवता की आगतः- १५ की - १५ कर्मभूमि मनुष्य के पर्याप्त। गत - ३० की - १५ कर्मभूमि के अपर्याप्त और पर्याप्त।

१४. बादर पृथ्वी, बादर पानी, प्रत्येक वनस्पति की आगत :- २४३ की - १७९ की लड (१०१ सम्मूर्च्छिम मनुष्य, १५ कर्मभूमि के अपर्याप्त व पर्याप्त ३० तथा ४८ तिर्यच) + ६४ जाति के देव। गत - १७९ की लड़।

★ सूक्ष्म पृथ्वी, पानी, वनस्पती एवं साधारण वनस्पती की आगत और गत - १७९ की लड़।

१५. तेऊ, वायु की आगत :- १७९ की लड। गत - ४८ तिर्यच की।

१६. तीन विकलेन्द्रिय की आगत व गत :- १७९ की लड।

१७. असंज्ञी तिर्यच की आगत :- १७९ की लड। गत ३९५ की - ५१ जाति के देव, ५६ अतरद्वीप, पहली नरक ये १०८ के अपर्याप्त व पर्याप्त २१६ एव १७९ की लड = ३९५ की।

१८. संज्ञी तिर्यच की आगत :- २६७ की - १७९ की लड, ८१ देव, ७ नरक। गत-पांचो की अलग-अलग।

१ जलचर की - ५२७ (५६३ मे से नौवे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक १८ जाति के देव के अपर्याप्त व पर्याप्त ३६ भेद छोडकर)।

२ उरपुर की ५२३ - उपर मे से छट्ठी और सातवी नरक के अपर्याप्त व पर्याप्त छोडकर।

३ स्थलचर की ५२१ - उपर मे से पांचवी नरक के अपर्याप्त व पर्याप्त छोडकर।

४. खेचर की ५१९ - उपर मे से चौथी नरक के अपर्याप्त व पर्याप्त छोडकर।

५ भुजपुर की ५१७ - उपर मे से तीसरी नरक के अपर्याप्त व पर्याप्त छोडकर।

१९. असंज्ञी मनुष्य की आगत :- १७१ की - १७९ की लड मे से तेऊ, वायु के आठ छोडकर। गत - १७९ की लड।

२०. १५ कर्मभूमि (संज्ञी मनुष्य) की आगत :- २७६ - १७१ की लड, ९९ जाति के देव और ६ नरक। गत - ५६३।

२१. ३० अकर्मभूमि की आगत २० की :- १५ कर्मभूमि और ५ सन्नी तिर्यच के पर्याप्त। गत - अलग-अलग नीचे अनुसार :-

अ - ५ देवकुरु, ५ उत्तरकुरु की १२८ (६४ जाति के देव के अपर्याप्त व पर्याप्त)।

ब - ५ हरिवास, ५ रम्यक्‌वास की आगत १२६ की - (उपर मे से पहली किल्विषी का अपर्याप्त व पर्याप्त छोड़कर)।

स - ५ हेमवय, ५ हिरण्यवय की १२४ - (उपर मे से दूसरे देवलोक के अपर्याप्त और पर्याप्त छोडकर।

२२. ५६ अंतरद्वीप की आगत :- २५ की - १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच, ५ असन्नी तिर्यच। गत - १०२ की - ५१ जाति के देव के अपर्याप्त व पर्याप्त।

२३. तीर्थंकर की आगत :- ३८ की - ३५ (१२ + ९ + ९ + ५) वैमानिक, १, २, ३ री नरक। गत - मोक्ष।

२४. चक्रवर्ती की आगत :- ८२ की - ८१ देव व पहली नरक। गत - दीक्षा ले तो देवलोक (अनुत्तर विमान) या मोक्ष, नही तो १४ (७ नरक के अपर्याप्त व पर्याप्त)।

२५. वासुदेव की आगत :- ३२ की - १२ देवलोक, ९ लोकांतिक, ९ ग्रैवेयक, १, २ री नरक। गत - १४ की - ७ नरक का अपर्याप्त व पर्याप्त।

२६. बलदेव की आगत :- ८३ की - ८१ देव, १, २ री नरक। गत - ७० की - ३५ वैमानिक के अपर्याप्त व पर्याप्त।

★ बलदेव पद मे मरते नही है (बलदेव नियमा दीक्षा लेते ही है, अत गत साधुवत्) इसलिए अमर पदवी जानना।

२७. केवली की आगत :- १०८ की - ८१ देव (१५ परमाधामी, तीन किल्विषी छोड़कर) १५ कर्मभूमि, ५ सन्नी तिर्यच, बादर पृथ्वी, पानी, वनस्पति, १, २, ३, ४ थी नरक। गत - मोक्ष।

२८. साधु की आगत :- २७५ की - १७१ की लड, ९९ जाति के देव, ५ नरक। गत - ७० की - ३५ वैमानिक के अपर्या., पर्या.।

२९. श्रावक की आगत :- २७६ की - उपरवत् २७५ मे छट्ठी नरक बढाना। गत - ४२ की - १२ देवलोक, ९ लोकातिक इन २१ के अपर्याप्त व पर्याप्त।

३०. सम्यक्दृष्टि की आगत :- ३६३ की - १७१ की लड, ९९ जाति के देव, ८६ युगलिक, ७ नरक।

गत - २८२ की - ८१ जाति के देव, १५ कर्मभूमि, ३० अकर्मभूमि। ५ सन्नी तिर्यच, ६ नरक इन १३७ के अपर्याप्त और पर्याप्त २७४ तथा ५ असन्नी तिर्यच एवं तीन विकलेन्द्रिय के अपर्याप्त इस प्रकार २७४ + ८ = २८२ की।

३१. मिथ्यादृष्टि की आगत :- ३७१ की - १७९ लड + ९९ देव + ८६ युगलिक + ७ नरक। गत - ५५३ की - ५ अनुत्तर विमान के अपर्याप्त और पर्याप्त ये १० छोडकर।

३२. स्त्रीवेद की आगत :- ३७१ की - उपरवत् । गत - ५६१ की - ७ वी नरक का अपर्याप्त व पर्याप्त छोडकर।

३३. पुरुषवेद की आगत :- ३७१ की - उपरवत् । गत - ५६३।

३४. नपुंसकवेद की आगत :- २८५ की - १७९ लड + ९९ देव + ७ नरक। गत - ५६३।

सेव भते - सेव भते

लघुदण्डक

जीवाभिगम सूत्र में :-

१. शरीर द्वार :-

शरीर पांच (औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तेजस्, कार्मण)।

१. नारकी, देवता मे शरीर तीन - वैक्रिय, तेजस् , कार्मण।

२. चार स्थावर मे (वायुकाय को छोडकर) शरीर तीन - औ., ते., का।

३. तीन विकलेन्द्रिय मे शरीर तीन - औ., ते., का.।

४. जुगलिया, असन्नी तिर्यच, असन्नी मनुष्य मे शरीर तीन - औ., ते., का.।

५. वायुकाय व सन्नी तिर्यच मे शरीर चार - औ., वे., ते., का.।

६. सन्नी मनुष्य मे शरीर पांच।

७. सिद्ध भ. अशरीरी।

२. अवगाहना द्वार :-

(१) नारकी की अवगाहना :- जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट अलग-अलग है :-

१ पहली नारकी की - पौने आठ धनुष और छः अंगुल।

२. दूसरी नारकी की - साढ़े पंद्रह धनुष और बारह अंगुल।

३. तीसरी नारकी की - सव्वा इकतीस धनुष।

४. चौथी नारकी की - साढे बासठ धनुष।

५. पाचवी नारकी की - १२५ धनुष।

६. छट्ठी नारकी की - २५० धनुष।

७ सातवी नारकी की - ५०० धनुष।

नोट :- उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के सख्यातवे भाग उत्कृष्ट अपनी-अपनी अवगाहना से दुगुनी जानना।

(२) देवता की अवगाहना - जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट अलग-अलग है -

१ भवनपति से दूसरे देवलोक तक के देवो की - सात हाथ।

२ तीसरे, चौथे देवलोक के देवो की - छह हाथ।

३. पाचवे, छठवे देवलोक के देवो की - पांच हाथ।

४ सातवे, आठवे देवलोक के देवो की - चार हाथ।

५ नववे से बारहवे देवलोक के देवो की - तीन हाथ।

६. नौ ग्रैवेयक के देवो की - दो हाथ।

७ चार अनुत्तर विमान के देवो की - एक हाथ।

८ सर्वार्थसिद्ध विमान के देवो की - मुंड हाथ।

☆ भवनपति से बारहवे देवलोक तक उत्तरवैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के सख्यातवे भाग, उत्कृष्ट एक लाख योजन।

☆ नवग्रैवेयक तथा पाच अनुत्तरविमान के देव उत्तरवैक्रिय (शक्ति है पर) नही करते।

(३) चार स्थावर (वनस्पतिकाय को छोडकर) और असन्नी मनुष्य की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट अगुल के असंख्यातवे भाग।

(४) वनस्पतिकाय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन से कुछ अधिक (कमलनाल की अपेक्षा)

(५) तीन विकलेन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असख्यातवे भाग, उत्कृष्ट - बेइन्द्रिय की १२ योजन,

तेइन्द्रिय की ३ गाउ (कोस),

चउरेन्द्रिय की ४ गाउ (कोस)।

(६) असन्नी तिर्यंच - सन्नी तिर्यंच की अवगाहना :-

जघन्य अगुल के असंख्यातवे भाग उत्कृष्ट निम्न .-

असन्नी तिर्यंच	सन्नी तिर्यच
जलचर - १००० योजन	१००० योजन
स्थलचर - प्रत्येक गाउ	६ गाउ
खेचर - प्रत्येक धनुष	प्रत्येक धनुष
उरपुर - प्रत्येक योजन	१००० योजन
भुजपुर - प्रत्येक धनुष	प्रत्येक गाउ

☆ - प्रत्येक शब्द जहाँ हो वहाँ दो से नव तक समझना।

☆ - सन्नी तिर्यच उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवे भाग, उत्कृष्ट ९०० योजन।

(७) सन्नी मनुष्य की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अवगाहना :-

अवसर्पिणीकाल	लगते आरे	उतरते आरे
१. पहला आरा	३ गाउ (कोस)	२ गाउ
२. दूसरा आरा	२ गाउ	१ गाउ
३. तीसरा आरा	१ गाउ	५०० धनुष
४. चौथा आरा	५०० धनुष	७ हाथ
५. पांचवां आरा	७ हाथ	२ हाथ
६. छठवां आरा	२ हाथ	१ हाथ

नोट :- "अ" - उत्सर्पिणी काल की अवगाहना अवसर्पिणी काल की अपेक्षा उल्टे क्रम से समझना।

"ब" - सन्नी मनुष्य उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवे भाग और उत्कृष्ट एक लाख योजन झाझेरी।

(८) युगलिक	जघन्य	उत्कृष्ट
१ हेमवय हिरण्यवय-	अंगुल के असख्यातवे भाग-	एक गाउ (कोस)
२ हरिवास रम्यकवास-	अंगुल के असंख्यातवे भाग-	दो गाउ
३ देवकुरु-उत्तरकुरु-	अंगुल के असंख्यातवे भाग-	तीन गाउ
४. छप्पन अतरद्वीप-	अंगुल के असंख्यातवे भाग-	आठ सौ धनुष

(९) सिद्ध भगवान - (आत्म प्रदेशों की) :-

१ ५०० धनुष के सिद्ध होवे तो - ३३३ धनुष और ३२ अंगुल।

२. ७ हाथ के सिद्ध होवे तो - ४ हाथ और १६ अंगुल।

३. २ हाथ के सिद्ध होवे तो - १ हाथ और ८ अंगुल।

३. संहनन द्वार :-

(१ वज्रऋषभनाराच २. ऋषभनाराच ३ नाराच ४. अर्धनाराच ५ कीलिका ६ सेवार्त)

१ नारकी, देवता मे संहनन नही।

२. पाच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय,
असंज्ञी तिर्यच और असज्ञी मनुष्य मे सेवार्त संहनन।

३. संज्ञी तिर्यच और संज्ञी मनुष्य मे छहो संहनन।

४ युगलिक मे - वज्रऋषभनाराच संहनन।

५ सिद्ध भ. मे सहनन नही।

४. संस्थान द्वार :-

(१. समचतुरस्र २. निग्रोधपरिमण्डल ३. सादिक ४. वामन ५. कुब्ज ६ हुण्डक)

१. देवता और युगलिक मे समचतुरस्र संस्थान।

२ पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, असंज्ञी तिर्यच और असंज्ञी मनुष्य मे हुण्डक सस्थान।

३ संज्ञी तिर्यच और संज्ञी मनुष्य मे छहो संस्थान।

४. सिद्ध भ. मे संस्थान नही।

५. कषाय द्वार :-

चौबीसो दण्डक मे चारो कषाय। सिद्ध भ. अकषायी।

६. संज्ञा द्वार :-

चौबीसो दण्डक मे चारो संज्ञा। सिद्ध भ. मे संज्ञा नही।

७. लेश्या द्वार :-

१. पहली, दूसरी नरक मे - कापोत लेश्या।

२. तीसरी नरक मे - कापोत और नील लेश्या।

३. चौथी नरक मे - नील लेश्या।

४. पांचवी नरक मे - नील और कृष्ण लेश्या।

५. छठवी नरक मे - कृष्ण लेश्या।

६. सातवी नरक मे - महाकृष्ण लेश्या।

७. भवनपति, वाणव्यंतर, युगलिक और बादर पृथ्वी, पानी, वनस्पति के अपर्याप्त मे प्रथम चार लेश्या।

८. ज्योतिषी और पहला, दूसरा देवलोक मे - तेजो लेश्या।

९. तीसरे, चौथे, पांचवे, देवलोक मे - पद्म लेश्या।

१०. छठे से सर्वार्थसिद्ध विमान तक - शुक्ल लेश्या

११. पृथ्वी, पानी, वनस्पति के पर्याप्त मे, तेउ, वायु, तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यच और असन्नी मनुष्य मे प्रथम तीन लेश्या।

१२. सन्नी तिर्यच और सन्नी मनुष्य मे - छहो लेश्या।

१३. सिद्ध भ. अलेशी (लेश्या नही)।

८. इंद्रिय द्वार :-

१. एकेन्द्रिय मे एक इन्द्रिय (स्पर्शइन्द्रिय)

२. बेइन्द्रिय मे दो इन्द्रिय (स्पर्शइन्द्रिय, रसेन्द्रिय)।

३. तेइन्द्रिय मे तीन इन्द्रिय (स्पर्शइन्द्रिय, रसेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय)।

४. चउरिन्द्रिय मे चार इन्द्रिय (स्पर्शइन्द्रिय, रसेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय)।

५. पंचेन्द्रिय मे पांच इन्द्रिय (स्पर्शइन्द्रिय, रसेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, श्रोतेन्द्रिय)।

६. सिद्ध भ. मे अनिन्द्रिय (इन्द्रिय नही)।

९. समुद्घात द्वार :-

(१. वेदनीय, २ कषाय, ३. मारणान्तिक, ४. वैक्रिय, ५ तेजस्, ६ आहारक, ७. केवली)।

१ नारकी और वायुकाय मे चार समुद्घात (वे., क., मा., वै.)

२ भवनपति, वाणव्यतर से १२ देवलोक तक, सन्नी तिर्यच मे पांच समुद्घात (वे , क , मा , वै , ते)।

३. नवग्रैवेयक और पांच अनुत्तरविमान मे तीन समुद्घात (वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक)।

४ (वायुकाय छोडकर) चार स्थावर मे, तीन विकलेन्द्रिय मे, असन्नी तिर्यच और असन्नी मनुष्य मे तीन समुद्घात (वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक)।

५ सज्ञी मनुष्य मे सात समुद्घात।

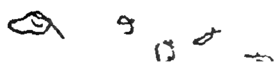
६ सिद्ध भ मे समुद्घात नही।

१०. सन्नी-असन्नी द्वार :-

१ पहली नरक, भवनपति, वाणव्यंतर-सन्नी, असन्नी दोनो।

२. दूसरी नरक से सातवी नरक तक - सन्नी।

३ ज्योतिषी से पांच अनुत्तर विमान तक - सन्नी।



४. पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यच और असन्नी मनुष्य - असन्नी।

५. सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य, युगलिक - सन्नी।

६. सिद्ध भ. - नो सन्नी नो असन्नी।

११. वेद द्वार :-

१. नारकी, असन्नी तिर्यच, असन्नी मनुष्य, पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय मे - नपुंसक वेद।

२. भवनपति से दूसरे देवलोक तक, युगलिक मे दो वेद - स्त्रीवेद, पुरुषवेद।

३. तीसरे देवलोक से पांच अनुत्तर विमान तक - पुरुषवेद।

४. सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य मे - तीनो वेद।

५. सिद्ध भ. अवेदी (वेद नही)।

१२. पर्याप्ति द्वार :-

१. नारकी और देवता मे छहो पर्याप्ति (भाषा और मन साथ मे बांधते)

२. संज्ञी तिर्यच, संज्ञी मनुष्य, युगलिक मे छहो पर्याप्ति।

३. पांच स्थावर मे चार पर्याप्ति (आ., श , इ., श्वा)।

४. असन्नी मनुष्य मे चार माठेरी (चार मे कुछ कम) पर्याप्ति।

५. तीन विकलेन्द्रिय, असन्नीतिर्यच मे पांच पर्याप्ति।

६. सिद्ध भ. नो पर्याप्त नो अपर्याप्त।

१३. दृष्टि द्वार :-

१. नारकी, भवनपति से नवग्रैवेयक तक - तीनो दृष्टि।

२. सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य मे - तीनो दृष्टि।

३. पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य, ५६ अंतरद्वीप के युगलिक एवं १५ परमाधामी, ३ किल्विषी मे - एक मिथ्यादृष्टि।

४ तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय के अपर्याप्त मे दो दृष्टि और पर्याप्त मे मिथ्यादृष्टि।

५ तीस अकर्मभूमि मे - दो दृष्टि (सम्यक, मिथ्या)।

६ पांच अनुत्तर विमान और सिद्ध भ. मे एक-सम्यक्दृष्टि।

१४. दर्शन द्वार :-

१ नारकी, देवता, सन्नी तिर्यच मे - तीन दर्शन (चक्षु, अचक्षु, अवधि)

२. पाच स्थावर, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय मे - अचक्षुदर्शन।

३ चउरिन्द्रिय, असन्नी तिर्यच, असन्नी मनुष्य, युगलिक मे - दो (चक्षु-अचक्षु) दर्शन।

४ सन्नी मनुष्य मे - चारो दर्शन।

५. सिद्ध भ मे - केवलदर्शन।

१५. ज्ञान द्वार :-

१ नारकी, भवनपति से नवग्रैवेयक तक, सन्नी तिर्यच मे - तीन ज्ञान, तीन अज्ञान। परमाधामी, किल्विषी मे तीन अज्ञान।

२ पाच अनुत्तर विमान मे - तीन ज्ञान।

३. पाच स्थावर, असन्नी मनुष्य, ५६ अन्तरद्वीप मे - दो अज्ञान, तीस अकर्मभूमि मे दो ज्ञान, दो अज्ञान।

४ तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यच के अपर्याप्त मे - दो ज्ञान, दो अज्ञान, पर्याप्त मे दो अज्ञान।

५ सन्नी मनुष्य मे - पाच ज्ञान, तीन अज्ञान।

६ सिद्ध भ. मे - केवलज्ञान।

१६. योग द्वार :-

१ नारकी, देवता मे ११ योग (४ मन के, ४ वचन के, वै., वै मिश्र, कार्मण ये ३ काया के)।

२. युगलिक मे - ११ योग (४ मन के, ४ वचन के, ३ काया के :- औ., औ. मिश्र और कार्मण)।

३. (वायुकाय छोड़कर) चार स्थावर और असन्नी मनुष्य मे - तीन योग (औ., औ. मिश्र और कार्मण)।

४. वायुकाय मे - पांच योग (औ., औ. मिश्र, वै., वै. मिश्र, कार्मण)

५. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच मे - चार योग (औ., औ मिश्र, व्यवहारभाषा, कार्मण)।

६. सन्नी तिर्यच मे - १३ योग (आहा., आहा. मिश्र छोडकर)

७. सन्नी मनुष्य मे - १५ योग।

८. सिद्ध भ. अयोगी (योग नही)।

१७. उपयोग द्वार :-

१. नारकी, भवनपति से नवग्रैवेयक तक ९ उपयोग - ३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन। परमाधामी, किल्विषी मे ३ अज्ञान ३ दर्शन।

२. पांच अनुत्तर विमान मे ६ उपयोग - तीन ज्ञान, तीन दर्शन।

३. पांच स्थावर मे ३ उपयोग - २ अज्ञान, एक अचक्षुदर्शन।

४. असन्नी मनुष्य और ५६ अंतरद्वीप मे - ४ उपयोग - दो अज्ञान, दो दर्शन।

५. बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय के अपर्याप्त मे ५ उपयोग - दो ज्ञान, दो अज्ञान, एक दर्शन और पर्याप्त मे - दो अज्ञान और एक दर्शन।

६. चउरिन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यच के अपर्याप्त मे ६ उपयोग - दो ज्ञान, दो अज्ञान, दो दर्शन और पर्याप्त मे - दो अज्ञान, दो दर्शन।

७. ३० अकर्मभूमि मे ६ उपयोग - दो ज्ञान, दो अज्ञान, दो दर्शन।

८ सन्नी तिर्यच मे ९ उपयोग - तीन ज्ञान, तीन अज्ञान, तीन दर्शन।

९. सन्नी मनुष्य मे १२ उपयोग।

१०. सिद्ध भ. मे दो उपयोग - केवलज्ञान, केवलदर्शन।

१८. आहार द्वार :-

१ पाच स्थावर को छोडकर १९ दण्डक के जीव छहो दिशा से २८८ भेद का आहार लेते है।

२ पाच स्थावर मे व्याघात न पडे तो छहो दिशा से २८८ भेद का आहार लेते है।

१९. उपपात - चवन द्वार :-

१ नारकी, भवनपति से आठवे देवलोक तक, चार स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी मनुष्य, असन्नी तिर्यच, सन्नी तिर्यच - एक समय मे जघन्य १,२,३ यावत् संख्यात, उत्कृष्ट असंख्यात उपजे और चवे।

२. नवमे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक, सन्नी मनुष्य युगलिक - जघन्य १,२,३ उत्कृष्ट सख्यात उपजे और चवे।

३ वनस्पतिकाय - प्रति समय अनंत उपजे और चवे।

४ सिध्द - एक समय मे जघन्य १,२,३ उत्कृष्ट १०८ सिध्द होवे।

२० स्थिति द्वार

नारकी की स्थिति :-

	जघन्य	उत्कृष्ट
१	१० हजार वर्ष	१ सागरोपम
२	१ सागरोपम	३ सागरोपम
३	३ सागरोपम	७ सागरोपम
४	७ सागरोपम	१० सागरोपम
५	१० सागरोपम	१७ सागरोपम
६.	१७ सागरोपम	२२ सागरोपम
७	२२ सागरोपम	३३ सागरोपम

२. देवता की स्थिति :-

	जघन्य	उत्कृष्ट
१ चमरेन्द्रजी के भवनवासी देवो की	१० हजार वर्ष	१ सागरोपम
२. भवनवासी देवीयो की	१० हजार वर्ष	साढे तीन पल्योपम
३. नवनिकाय देवो की	१० हजार वर्ष	डेढ़ पल्योपम
४. नवनिकाय देवियो की	१० हजार वर्ष	पौन पल्योपम
५. बलीन्द्रजी के भवनवासी देवो की	१० हजार वर्ष	१ सागरोपम झाझेरी
६. देवियो की	१० हजार वर्ष	साढे चार पल्योपम
७. नवनिकाय देवो की	१० हजार वर्ष	देशोन दो पल्योपम
८. नवनिकाय देवियो की	१० हजार वर्ष	देशोन एक पल्योपम
९. वाणव्यन्तर देवो की	१० हजार वर्ष	१ पल्योपम
१०. वाणव्यन्तर देवियो की	१० हजार वर्ष	आधा पल्योपम
११. (ज्योतिष) चन्द्र विमानवासी देवो की	पाव पल्योपम	१ पल्योपम और एक लाख वर्ष
१२. देवियो की	पाव पल्योपम	आधा पल्योपम, ५० हजार वर्ष
१३. सूर्य विमानवासी देवो की	पाव पल्योपम	१ पल्योपम, १ हजार वर्ष
१४. देवियो की	पाव पल्योपम	आधा पल्योपम, ५०० वर्ष
१५. ग्रह देवो की	पाव पल्योपम	एक पल्योपम
१६ देवियो की	पाव पल्योपम	आधा पल्योपम

१७	नक्षत्र देवो की	पाव पल्योपम	आधा पल्योपम
१८	देवियो की	पाव पल्योपम	पाव पल्योपम झाझेरी
१९	तारा देवो की	पल्योपम के आठवे भाग	पाव पल्योपम
२०	देवियो की	पल्योपम के आठवे भाग	पल्योपम के आठवे भाग झाझेरी

वैमानिक देवों की स्थिति

१. प्रथम देवलोक के देवो की	१ पल्योपम	२ सागरोपम
परिगृहीता देवियो की	१ पल्योपम	७ पल्योपम
अपरिगृहीता देवियो की	१ पल्योपम	५० पल्योपम
२. दुसरे देवलोक के देवो की	१ पल्योपम झाझेरी	२ सागरोपम झाझेरी
परिगृहीता देवियो की	१ पल्योपम झाझेरी	९ पल्योपम
अपरिगृहीता देवियो की	१ पल्योपम झाझेरी	५५ पल्योपम
	(पहली किल्विषी की - ३ पल्योपम)	
३ तीसरे देवलोक के देवो की	२ सागरोपम	७ सागरोपम
४ चौथे देवलोक के देवो की	२ सागरोपम झाझेरी	७ सागरोपम झाझेरी
	(दूसरी किल्विषी की - ३ सागरोपम)	
५ पांचवे देवलोक के देवो की	७ सागरोपम	१० सागरोपम
	(लोकान्तिक देव की ज. और उ. ८ सागरोपम)	

६. छठे देवलोक के देवो की	१० सागरोपम	१४ सागरोपम
	(तीसरी किल्विषी की - १३ सागरोपम)	
७. सातवे देवलोक के देवो की	१४ सागरोपम	१७ सागरोपम
८. आठवे देवलोक के देवो की	१७ सागरोपम	१८ सागरोपम
९. नवमे देवलोक के देवों की	१८ सागरोपम	१९ सागरोपम
१०. दसवे देवलोक के देवो की	१९ सागरोपम	२० सागरोपम
११ ग्यारहवे देवलोक के देवो की	२० सागरोपम	२१ सागरोपम
१२. बारहवे देवलोक के देवो की	२१ सागरोपम	२२ सागरोपम
१३. पहली त्रिक के देवो की	२२ सागरोपम	२५ सागरोपम
१४. दूसरी त्रिक के देवो की	२५ सागरोपम	२८ सागरोपम
१५. तीसरी त्रिक के देवो की	२८ सागरोपम	३१ सागरोपम
१६ चार अनुत्तर विमान के देवो की	३१ सागरोपम	३३ सागरोपम
१७. सर्वार्थसिद्ध के देवो की	३३ सागरोपम	३३ सागरोपम

पांच स्थावर की स्थिति :-

नाम	जघन्य	उत्कृष्ट
१. पृथ्वीकाय	अन्तर्मुहूर्त	बावीस हजार वर्ष
२. अप्काय	अन्तर्मुहूर्त	सात हजार वर्ष
३. तेउकाय	अन्तर्मुहूर्त	तीन अहोरात्रि
४. वायुकाय	अन्तर्मुहूर्त	तीन हजार वर्ष
५ वनस्पतिकाय	अन्तर्मुहूर्त	दस हजार वर्ष

तीन विकलेन्द्रिय की स्थिति :-

नाम	जघन्य	उत्कृष्ट
१ बेइन्द्रिय की	अन्तर्मुहूर्त	१२ वर्ष की
२ तेइन्द्रिय की	अन्तर्मुहूर्त	४९ दिन-रात की
३ चउरिन्द्रिय की	अन्तर्मुहूर्त	छह माह की
४ असन्नी अनुष्य की	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त की

असन्नी तिर्यच और सन्नी तिर्यच पंचेन्द्रिय की स्थिति :-

जघन्य सभी की अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अलग-अलग है -

नाम	असन्नी तिर्यच	सन्नी तिर्यच
१ जलचर	एक करोड पूर्व की	१ करोड पूर्व की
२ स्थलचर	८४ हजार वर्ष की	तीन पल्योपम की
३ खेचर	७२ हजार वर्ष की	पल्योपम के असंख्यातवे भाग की
४. उरपरिसर्प	५३ हजार वर्ष की	एक करोड पूर्व की
५ भुजपरिसर्प	४२ हजार वर्ष की	एक करोड पूर्व की

सन्नी मनुष्य की ज. अं. उ. निम्न (अवसर्पिणीकाल की)

लगते आरे	उतरते आरे
१ तीन पल्योपम	दो पल्योपम
२ दो पल्योपम	एक पल्योपम
३. एक पल्योपम	करोडपूर्व
४. करोडपूर्व	सौ वर्ष झाझेरी
५. सौ वर्ष झाझेरी	२० वर्ष
६ २० वर्ष	१६ वर्ष

* उत्सर्पिणीकाल में इससे उल्टा समझना।

युगलिक	जघन्य	उत्कृष्ट
१. हेमवय, हिरण्यवय की	- एक पल्योपम मे कम	- एक पल्योपम
२. हरिवास, रम्यकवास की	- दो पल्योपम मे कम	- दो पल्योपम
३. देवकुरू, उत्तरकुरू की	- तीन पल्योपम मे कम	- तीन पल्योपम
४. छप्पन अन्तरद्वीप की	- पल्योपम के असंख्यातवे भाग मे कम	- पल्योपम का असंख्यातवॉ भाग

सिद्ध भ. - एक सिद्ध की अपेक्षा सादि अनंत और सभी सिध्दो की अपेक्षा अनादि अनंत।

२१. समोहया असमोहया मरण द्वार :-

चोबीसो दण्डक मे दोनो प्रकार का मरण होता है। सिद्ध भ मे मरण नही होता है।

२२. गतागत द्वार :-

१. पहली नारकी से छठी नारकी तक दो गति से आवे और दो गति मे जावे (तिर्यच और मनुष्य)। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे और दो दण्डक मे जावे।

२. सातवी नारकी - दो गति से आवे और एक तिर्यच गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा - दो दण्डक से आवे, एक दण्डक मे जावे।

३. भवनपति से दूसरे देवलोक तक दो गति से आवे और दो गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे और पांच दण्डक मे जावे (पृथ्वी, पानी, वनस्पति, तिर्यच पचे., मनुष्य)।

४. तीसरे देवलोक से आठवे देवलोक तक दो गति से आवे और दो गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा दो दण्डक से आवे और दो दण्डक मे जावे (तिर्यच पंचेन्द्रिय व मनुष्य)।

५ नवमे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध विमान तक एक गति से आवे और एक गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा एक दण्डक से आवे और एक दण्डक (मनुष्य) मे जावे।

६. पृथ्वी, पानी, वनस्पतिकाय तीन गति (तिर्यच, मनुष्य, देव) से आवे और दो गति (ति. मनु) मे जावे। दण्डक की अपेक्षा-नरक छोड २३ दण्डक से आवे और १० दण्डक मे जावे।

७. तेउकाय, वायुकाय दो गति, से आवे और एक तिर्यच गति मे जावे, दण्डक की अपेक्षा १० दण्डक से आवे और (५ स्था + ३ विकले. + १ ति. पं) ९ दण्डक मे जावे।

८ असन्नी मनुष्य दो गति से आवे और दो गति मे जावे।

दण्डक की अपेक्षा (तेउ, वायु छोडकर) आठ दण्डक से आवे और १० दण्डक मे जावे (५ स्था + ३ विकले + १ ति पं. + १ मनु.)।

९ तीन विकलेन्द्रिय दो गति से आवे और दो गति मे जावे दण्डक की अपेक्षा १० दण्डक से आवे, १० दण्डक मे जावे।

१० असन्नी तिर्यच दो गति से आवे और चार गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा १० दण्डक से आवे और (ज्योतिष एव वैमानिक को छोडकर) २२ दण्डक मे जावे।

११ सन्नी तिर्यच - चार गति से आवे और चार गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा चौबीस दण्डक से आवे और चौबीस दण्डक मे जावे।

१२ सन्नी मनुष्य - चार गति से आवे और पांच गति मे जावे। दण्डक की अपेक्षा (तेउ, वायु छोडकर) २२ दण्डक से आवे और चौबीस दण्डक मे जावे।

१३. युगलिक - दो गति से आवे ओर एक देवगति मे जावे।

दण्डक की अपेक्षा - तीस अकर्मभूमि - दो दण्डक से आवे और १३ दण्डक (देव के) मे जावे।

छप्पन अन्तरद्वीप - दो दण्डक से आवे और ११ दण्डक (१० भवनपति और १ वाणव्यन्तर) मे जावे।

१४. सिद्ध - एक मनुष्य गति और मनुष्य के दण्डक से आवे और जावे नही।

२३ प्राण द्वार :-

१. नारकी, देवता, सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य, युगलिक मे दसो प्राण पावे।

२. पांच स्थावर मे प्राण पावे चार। असन्नी मनुष्य मे कुछ कम आठ प्राण पावे।

३. बेइन्द्रिय मे ६ प्राण पावे। तेइन्द्रिय मे ७ प्राण पावे। चउरिन्द्रिय मे ८ प्राण पावे। असन्नी तिर्यच पं. मे ९ प्राण।

४. सिद्धो मे द्रव्य प्राण नही, भाव प्राण चार पावे (ज्ञान, दर्शन, सुख, आत्मशक्ति)

२४ योगद्वार :-

१. नारकी, देवता, सन्नी तिर्यच, सन्नी मनुष्य और युगलिक मे योग तीनो पावे (मन/वचन/काया)

२. पांच स्थावर और असन्नी मनुष्य मे एक (काय) योग पावे।

३. तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यच मे दो (वचन, काया) योग पावे।

४. सिद्धो मे योग नही पावे (अयोगी)।

सेवं भते - सेवं भते

दस पच्चक्खाण

(१) नमोक्कार सहियं

नवकारसी के पच्चक्खाण चउव्विहंपि आहारं असणं, पाणं, खाइमं, साइम, अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेण, वोसिरामि।

(२) पोरसी

पोरसी के पच्चक्खाण चउव्विहंपि आहारं असणं, पाणं, खाइम, साइम, अण्णत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेण, सव्वसमाहिवत्तियागारेण, वोसिरामि।

(३) (पुरिमड्ढ) दो पोरसी

दो (तीन) पोरसी के पच्च., चउ , अण्ण., सह., पच्छ , दिसा , साहु , महत्तरागारेणं, सव्व., वोसिरामि।

(४) एकासण (बियासण)

एकासना के पच्च०, तिवि०, अण्ण०, सहसा०, गुरु०, सागा०, आउट्टण०, परिट्ठा०, मह०, सव्व०, वोसिरामि।

(५) एकलट्ठाणा

एकस्थान के पच्च०, तिवि० (चउ०), अण्ण०, सहसा०, गुरु०, सागारि०, परिट्ठा०, सव्व०, वोसिरामि।

(६) निर्विगइय

निवि के पच्च०, तिविहंपि असणं, खाइमं, साइमं, अण्ण०, सह०, सागारियागारेण०, आउट्टणपसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेण, लेवालेवेणं, गिहत्थससट्ठेण, उक्खित्तविवेगेणं, पडुच्चमखेणं, परिट्ठावणियागारेण, महत्तरागारेणं, सव्व०, वोसिरामि।

(७) आयंबिल

आयंबिल के पच्च॰, तिवि॰, अण्ण॰, सहसा॰, सागा॰, आउंट्टण॰, गुरू॰, लेवा॰, गिह॰, उक्खित्त॰, परिट्ठा॰, महत्ता॰, सव्व॰, वोसिरामि।

(८) उपवास (अभत्तट्ठं, चउत्थभत्तं)

उपवास तिविहार/चउविहार के पच्च॰, चउ॰, अण्ण॰, सह॰, परिट्ठावणियागारेणं, मह॰, सव्व॰, वोसिरामि।

(९) दिवस चरिम

दिवस चरिम के पच्च., चउ., अण्ण॰, सह॰, (महा॰), सव्व॰, वोसिरामि।

(१०) अभिग्रह

अभिग्रह के पच्च॰, चउ॰, अण्ण॰, सह॰, मह॰, सव्व॰, वोसिरामि।

पच्चक्खाण पालने का पाठ :-

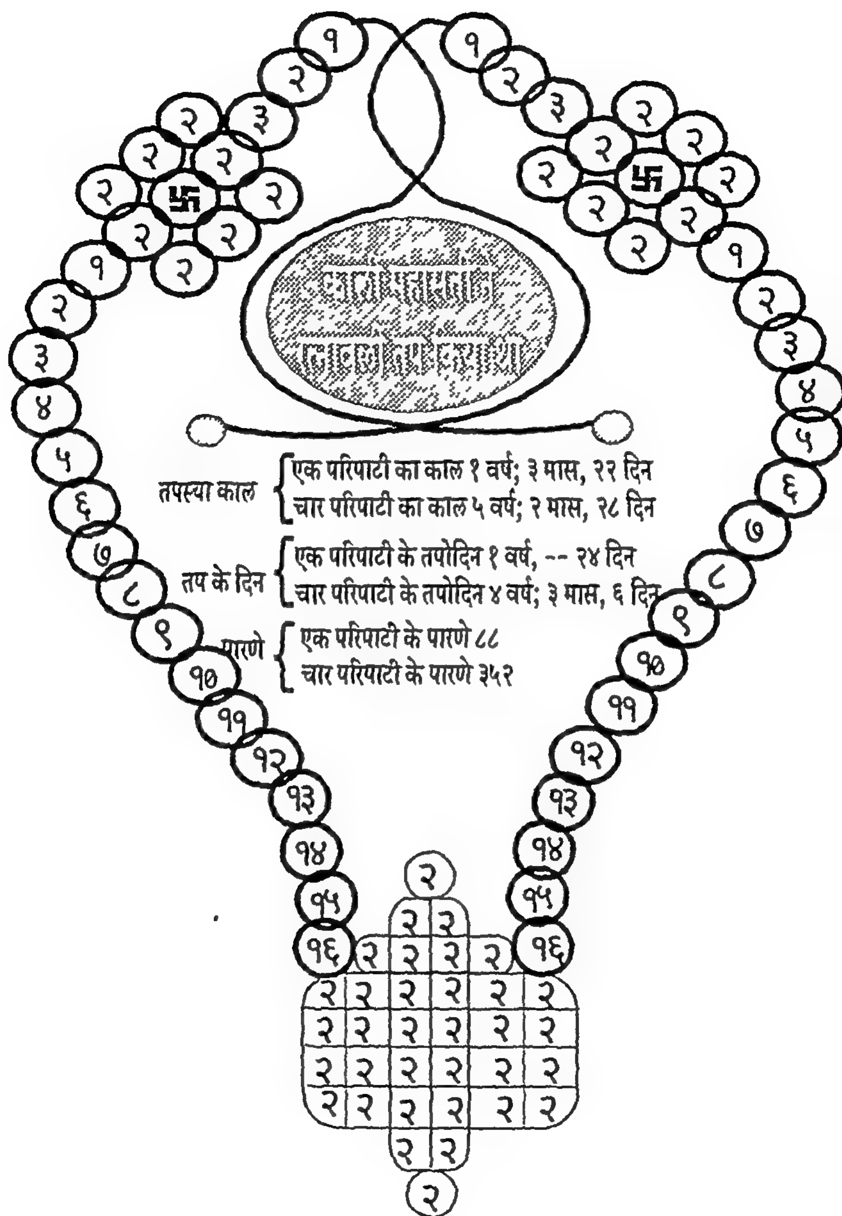
लिये हुए पच्चक्खाण पूरे होने पर पालता हूँ।

सम्मं काएणं, फासियं, पालियं, सोहियं, तिरियं, किट्टियं, आराहिय, आणाए, अणुपालियं न भवइ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

मेरे पच्चक्खाण हितकारी, कल्याणकारी, सुखकारी और भवोभव मे साथ चलनेवाले होवे।

❋ अंत मे ३ नवकार मंत्र गीनना।

सेव भंते - सेव भंते


तपस्या काल
एक परिपाटी का काल १ वर्ष; ३ मास, २२ दिन
चार परिपाटी का काल ५ वर्ष; २ मास, २८ दिन
तप के दिन
एक परिपाटी के तपोदिन १ वर्ष, -- २४ दिन
चार परिपाटी के तपोदिन ४ वर्ष; ३ मास, ६ दिन
पारणे
एक परिपाटी के पारणे ८८
चार परिपाटी के पारणे ३५२



तपस्या काल
एक परिपाटी का काल
९ वर्ष, ५ मास १२ दिन
चार परिपाटी का काल
५ वर्ष; ९ मास १८ दिन
तप के दिन
एक परिपाटी के तपोदिन ,
१ वर्ष, २ मास ९४ दिन
चार परिपाटी के तपोदिन
४ वर्ष; ९ मास २६ दिन
पारणे
एक परिपाटी के पारणे ८८
चार परिपाटी के पारणे ३५२

१ २ १ ३ २ ४ ३ ५ ४ ६ ५ ७ ६ ८ ७ ९

८

१ २ १ ३ २ ४ ३ ५ ४ ६ ५ ७ ६ ८ ७ ९

तपस्या काल
- एक परिपाटी का काल ६ मास ७ दिन
- चार परिपाटी का काल २ वर्ष, २८ दिन

तप के दिन
- एक परिपाटी के तपोदिन, ५ मास ४ दिन
- चार परिपाटी के तपोदिन १ वर्ष, ८ मास १६ दिन

पारणे
- एक परिपाटी के पारणे ३३
- चार परिपाटी के पारणे १३२



१	१
२	२
१	१
३	३
२	२
४	४
३	३
५	५
४	४
६	६
५	५
७	७
६	६
८	८
७	७
९	९
८	८
१०	१०
९	९
११	११
१०	१०
१२	१२
११	११
१३	१३
१२	१२
१४	१४
१३	१३
१५	१५
१४	१४
१६	१६

तपस्या काल
- एक परिपाटी का काल १ वर्ष, ६ मास १८ दिन
- चार परिपाटी का काल ६ वर्ष; २ मास १२ दिन

तप के दिन
- एक परिपाटी के तपोदिन , १ वर्ष, ४ मास १७ दिन
- चार परिपाटी के तपोदिन ५ वर्ष; ६ मास ८ दिन

पारणे
- एक परिपाटी के पारणे ६१
- चार परिपाटी के पारणे २४४



‘सुकृष्णा’ महासती ने सप्तसप्तमिका
भिक्षु प्रतिमा तप किया था।

१	१	१	१	१	१	१	७
२	२	२	२	२	२	२	१४
३	३	३	३	३	३	३	२१
४	४	४	४	४	४	४	२८
५	५	५	५	५	५	५	३५
६	६	६	६	६	६	६	४२
७	७	७	७	७	७	७	४९

१) ७ X ७=४९ दिन १६६ दतियाँ सप्तसप्तमिका
२) ८ X ८ = ६४ दिन २८८ दतियाँ अष्टअष्टमिका
३) ९ X ९ = ८१ दिन ४०० दतियाँ नवनवमिका
४) १० X १०= १०० दिन ५५० दतियाँ दस दशदशमिका

'महाकृष्णा' महासती ने 'लघु सर्वतोभद्र' तप किया था।

१	२	३	४	५
३	४	५	१	२
५	१	२	३	४
२	३	४	५	१
४	५	१	२	३

एक परिपाटी मे ३ मास १० दिन।

चार परिपाटी मे १ वर्ष १ मास १० दिन।

एक परिपाटी मे तप दिन २ माह १५ दिन, पारणा २५ दिन।

चार परिपाटी मे तप दिन १० मास, पारणा १०० दिन।

'वीरकृष्णा' महासती ने
'महासर्वतोभद्र' तप किया था।

१	२	३	४	५	६	७
४	५	६	७	१	२	३
७	१	२	३	४	५	६
३	४	५	६	७	१	२
६	७	१	२	३	४	५
२	३	४	५	६	७	१
५	६	७	१	२	३	४

एक परिपाटी मे ८ मास ५ दिन।

चार परिपाटी मे २ वर्ष ८ मास २० दिन।

एक परिपाटी मे तप दिन ६ मास १६ दिन, पारणा ४९ दिन।

चार परिपाटी मे तप दिन २ वर्ष २ मास ४ दिन, पारणा १९५ दिन।

'रामकृष्णा' महासती ने 'भद्रोत्तर प्रतिमा' तप किया था।

५	६	७	८	९
७	८	९	५	६
९	५	६	७	८
६	७	८	९	५
८	९	५	६	७

एक परिपाटी मे ६ मास २० दिन।

चार परिपाटी मे २ वर्ष २ मास २० दिन।

एक परिपाटी मे तप दिन ५ मास २५ दिन; पारणा २५ दिन।

४ परिपाटी मे १ वर्ष ११ मास १० दिन; पारणा १०० दिन।





तपस्या काली
- एक परिपाटी का काल ११ मास १५ दिन
- चार परिपाटी का काल ३ वर्ष; १० मास

तप के दिन
- एक परिपाटी के तपोदिन ९ माह, १५ दिन
- चार परिपाटी के तपोदिन ३ वर्ष; २ मास

पारणे
- एक परिपाटी के पारणे ६०
- चार परिपाटी के पारणे २४०



'महासेन कृष्णा' महासतीने 'वर्धमान आयम्बिल' तप किया था।

१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
९	१९	२९	३९	४९	५९	६९	७९	८९	९९
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
८	१८	२८	३८	४८	५८	६८	७८	८८	९८
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
७	१७	२७	३७	४७	५७	६७	७७	८७	९७
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
६	१६	२६	३६	४६	५६	६६	७६	८६	९६
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
५	१५	२५	३५	४५	५५	६५	७५	८५	९५
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
४	१४	२४	३४	४४	५४	६४	७४	८४	९४
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
३	१३	२३	३३	४३	५३	६३	७३	८३	९३
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
२	१२	२२	३२	४२	५२	६२	७२	८२	९२
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
१	११	२१	३१	४१	५१	६१	७१	८१	९१

कुल दिन ५१५० (१४ वर्ष, ३ मास, २० दिन)

आयंबिल दिन ५०५० (१४ वर्ष, १० दिन)

उपवास दिन - १०० (३ मास १० दिन)